

२४ तीर्थंकर महाराजों के नाम

- १ श्री आपमदेवजी महा० १३ श्री विमलमयवजी महा०
 २ श्री अक्षितमावजी ॥ १४ श्री अमलनाथजी ॥
 ३ श्री संभवनाथजी ॥ १५ श्री वर्मनाथजी ॥
 ४ श्री अमिनन्दावजी ॥ १६ श्री शान्तिनाथजी ॥
 ५ श्री सुमतिनाथजी ॥ १७ श्री कुन्नुनाथजी ॥
 ६ श्री पद्मपुत्री , १८ श्री अर्जुनाथजी ॥
 ७ श्री सुकरवैष्णवजी ॥ १९ श्री मङ्गलनाथजी ॥
 ८ श्री चन्द्रपद्मजी , २० श्री सुमिसुप्तजी ॥
 ९ श्री सुविजित्वजी ॥ २१ श्री लघ्विनाथजी ॥
 १० श्री शौचकान्तावजी , २२ श्री अरिष्टमेयिनाथजी ॥
 ११ श्री मेरुकावजी ॥ २३ श्री परवर्धनाथजी ॥
 १२ श्री बासुपूज्यजी ॥ २४ श्री महावीरस्वामीजी ॥

(३)

२० श्री विहरमान तीर्थंकरों के नाम

- | | |
|---------------------------|-----------------------------|
| १ श्री सिमंधरस्वामीजी | ११ श्री विशालधरस्वामीजी |
| २ श्री युगमंधरस्वामीजी | १२ श्री चन्द्रानन स्वामीजी |
| ३ श्री बाहुस्वामीजी | १३ श्री चन्द्रबाहु स्वामीजी |
| ४ श्री सुबाहुस्वामीजी | १४ श्री भुजंगस्वामीजी |
| ५ श्री सुजातस्वामीजी | १५ श्री ईश्वरस्वामीजी |
| ६ श्री स्वयंप्रभुस्वामीजी | १६ श्री नेमप्रभुस्वामीजी |
| ७ श्री ऋषभानंदस्वामीजी | १७ श्री वीरसेनस्वामीजी |
| ८ श्री अनंतवीर्यस्वामीजी | १८ श्री महाभद्रस्वामीजी |
| ९ श्री सूरप्रभुस्वामीजी | १९ श्री देवयशस्वामीजी |
| १० श्री वृषधरस्वामीजी | २० श्री अजितवीर्य स्वामीजी |



११ श्री गणधर महाराजों के नाम

- | | |
|-----------------------|--------------------|
| १ श्री इन्द्रमूर्तिजी | ७ श्री धीरपुत्रजी |
| २ श्री अग्निमूर्तिजी | ८ श्री अर्धपितृजी |
| ३ श्री वायुमूर्तिजी | ९ श्री अचलमूर्तिजी |
| ४ श्री विगतमूर्तिजी | १० श्री मेघारजजी |
| ५ श्री सुवर्मात्माजी | ११ श्री प्रमाद्यजी |
| ६ श्री रंजी पुत्रजी | |

१६ श्री सतियों के नाम

- | | |
|----------------------|--------------------|
| १ श्री गायत्रीजी | ६ श्री दुर्गावतीजी |
| २ श्री सुन्दरीजी | ७ श्री बेलामयीजी |
| ३ श्री कौशल्याजी | ८ श्री प्रमाद्यीजी |
| ४ श्री सीताजी | ९ श्री सुमित्राजी |
| ५ श्री राजमयीजी | १० श्री दमयन्तीजी |
| ६ श्री कुन्तीजी | ११ श्री सुवर्णाजी |
| ७ श्री द्रौपदीजी | १२ श्री विद्याजी |
| ८ श्री चन्द्रमहालाजी | १३ श्री पद्मावतीजी |

(५)

षट्द्रव्य भिन्न २ कहा जिनवर आगम सुनत व्याख्यान ।
 पंचास्तिकाय नव पदार्थ पंच भाषा ज्ञान ॥
 चारित्र तेरह कहा जिनवर ज्ञान दर्शन प्रधान ।
 जो शास्त्र नित्य सुनो भव्यजन आन शुद्धमन ध्यान ॥
 चौवीस तीर्थंकर लोक माहीं तरण तारण जहाच्च ।
 नव वासु नव प्रतिवासुदेवा बारह चक्रवर्ती जान ॥
 बलदेव नव स्रव हुवा त्रेसठ धन्य गुणारी खान ।
 जो शास्त्र नित्य सुनो भव्यजन आन शुद्धमन ध्यान ॥
 चार देशना दी थी जिनवर कियो पर संपकार ।
 पाच अणुव्रत चार शिक्षा तीन गुणव्रत धार ॥
 पाँच सवर जिनेश्वर भाषा दया धर्म प्रधान ।
 जो शास्त्र नित्य सुनो भव्यजन आन शुद्ध मन ध्यान ॥

(१)

घोर कहीं जग कहीं भी वर्षेन तीन लोक प्रमाण ।
 मुक्त पाप विनाश कार्ये पायें यह निर्वाण ॥
 देव वैमानिक माहें परबी कही भी पंच प्रधान ।
 जो शास्त्र मिल्य मुनो भक्त्यजन व्याप्युद्य मन ध्यान ॥
 दोहा—विष्णु हरद मंगल करस धन्य भी ब्रह्मचर्य ।
 जिन समरिहो पयक ठहें दूरे जाठो कर्म ॥
 धन्य साधु धन्य साध्वी धन्य भी ब्रह्मचर्य ।
 जिन समरिहो संकट ठहें दूरे जठो कर्म ॥
 दोहा—इष्ट स्तवन को प्रत्यक्ष क्यक्यन के पीछे
 पढ़ना चाहिय ।



सप्त कुव्यसन निषेध

१. शिकार खेलना, २. जूवा, सट्टा खेलना
३. चोरी करना, ४. मास भक्षण, ५. मदिरा पान,
६. पर स्त्री गमन, ७. वेश्या गमन ।

नोट—प्रत्येक मनुष्य को इन सातों कुव्यसनों का
त्याग करना चाहिए इनका त्याग करने से
प्राणीमात्र को कल्याण का मार्ग प्राप्त हो
सकता है अन्यथा नहीं ।

सागारी संथारा करने का दोहा

आहार शरीर उपधि पचखूँ पाप अट्टार ।

मरन पाऊँ तो बसिरे जीऊँ तो आगार ॥

नोट—संथारा तीन बार नवकार मंत्र पढ़ कर पारना
चाहिये ।

(८)

अनुपूर्वी पढ़ने की विधि

जहाँ १ है वहाँ यमो अतिदृग्ग्यं बोद्धव्यं चाहिये
जहाँ २ है वहाँ यमो छिद्यं बोद्धव्यं चाहिये
जहाँ ३ है वहाँ यमा आपरिण्यं बोद्धव्यं चाहिये
जहाँ ४ है वहाँ यमो वचस्मर्यायं बोद्धव्यं चाहिये
जहाँ ५ है वहाँ यमो कोप सम्प्रसाह्यं बोद्धव्यं चाहिये

अनुपूर्वी गुणने का फल

अनुपूर्वी गुण्ये जो कोव जमासी तपमो फलहोय ।
सर्वद मत्त अण्यो जगत्तर निर्मैह मने जपो नवकर ॥
छन्द मन बरी विवेक से जो पायी इसको मखे ।
सत्त्वमाया विनेरकर मे, पाँचवीं सागरम्य पावइये
अष्टम कर्म के हरकको, मन्त्र बको नवकर ।
बायी छन्दय अंग में देख जियो तत्त्व छर ॥३॥

(६)

१	२	३	४	५
---	---	---	---	---

२	१	३	४	५
---	---	---	---	---

१	३	२	४	५
---	---	---	---	---

३	१	२	४	५
---	---	---	---	---

२	३	१	४	५
---	---	---	---	---

३	२	१	४	५
---	---	---	---	---

१	२	४	३	५
२	१	४	३	५
१	४	२	३	५
४	१	२	३	५
२	४	१	३	५
४	२	१	३	५

१	३	४	२	५
३	१	४	२	५
१	४	३	२	५
४	१	३	२	५
३	४	१	२	५
४	३	१	२	५

(१२)

२	३	४	१	५
३	२	४	१	५
२	४	३	१	५
४	२	३	१	५
३	४	२	१	५
४	३	२	१	५

१	२	३	५	४
२	१	३	५	४
१	३	२	५	४
३	१	२	५	४
२	३	१	५	४
३	२	१	५	४

	2	4	3	8	
2	?	7	3	8	
?	4	2	3	8	
4	?	2	3	8	
2	4	?	3	8	
4	2	?	3	8	

(१५)

१	३	५	२	४
३	१	५	२	४
१	५	३	२	४
५	१	३	२	४
३	५	१	२	४
५	३	१	२	४

(११)

२	३	५	१	४
३	२	५	१	४
२	५	३	१	४
५	२	३	१	४
३	५	२	१	४
५	३	२	१	४

(१०)

१	२	४	५	३
२	१	४	५	३
१	४	२	५	३
४	१	२	५	३
२	४	१	५	३
४	२	१	५	३

(२३)

१	४	५	३	२
४	१	५	३	२
१	५	४	३	२
५	१	४	३	२
४	५	१	३	२
५	४	१	३	२

२	४	५	१	३
४	२	५	१	३
२	५	४	१	३
५	२	४	१	३
४	५	२	१	३
५	४	२	१	३

१	३	४	५	२
३	१	४	५	२
१	४	३	५	२
४	१	३	५	२
३	४	१	५	२
४	३	१	५	२

(१८)

१	२	५	४	३
२	१	५	४	३
१	५	२	४	३
५	१	२	४	३
२	५	१	४	३
५	२	१	४	३

(१६)

१	४	५	२	३
४	१	५	२	३
१	५	४	२	३
५	१	४	२	३
४	५	१	२	३
५	४	१	२	३

३	४	५	१	२
४	३	५	१	२
३	५	४	१	२
५	३	४	१	२
४	५	३	१	२
५	४	३	१	२

(२५)

२	३	४	५	१
३	२	४	५	१
२	४	३	५	१
४	२	३	५	१
३	४	२	५	१
४	३	२	५	१

२	३	५	४	१
३	२	५	४	१
२	५	३	४	१
५	२	३	४	१
३	५	२	४	१
५	३	२	४	१

(२७)

२	४	५	३	१
---	---	---	---	---

४	२	५	३	१
---	---	---	---	---

२	५	४	३	१
---	---	---	---	---

५	२	४	३	१
---	---	---	---	---

४	५	२	३	१
---	---	---	---	---

५	४	२	३	१
---	---	---	---	---

(२८)

३	४	५	२	१
४	३	५	२	१
३	५	४	२	१
५	३	४	२	१
४	५	३	२	१
५	४	३	२	१

ॐ श्री सामयिक सूत्र ॐ

(मूल पाठ)

पंच परमेष्ठी मन्त्र

शमो अरिहंताणं । शमो सिद्धाणं ।

शमो आयरियाण । शमो उवज्जमायाणं ।

शमो लोण सच्च साहणं ।

एतो पंच शमोषारो । सच्च पाप पण्यासणो ।

मंगलार्ण च सच्चैसि । पद्म हवर्ह मंगलं ॥

२ गुरु वन्दना

तिष्ठन्मुक्तो आयादित्यं वयादित्यं करोमि वंशमि
 धर्मसामि सत्त्वरेमि सम्मासेमि कन्यायं मंगलं
 देववं चेद्वं पञ्चबासामि मत्पस्तु वंशमि ॥

३ सम्यक्त्व पाठ

अरिहंशो महर्षेणो आच जीवाय सुखाह सुगुह्यं ।
 त्रिष्य पश्यन्तं तत्तं पञ्चमन्तं मे गदित्यं ॥१॥
 पञ्चदिय संवरणो तह मय विह वंमचेर मुक्ति धरो ।
 चरविहकस्यय मुक्ते इव अहारस्त गुणदि संमुक्तो ॥
 पञ्चमहर्ष्यवमुक्तो पञ्चविह आचार पाकत समस्तो ।
 पञ्च समिह विमुक्तो अचीरत गुणोगुह दोई सो
 गुह मङ्ग ॥२॥

૪. ગમનાગમને રૂપ પાપ નિવૃત્તિ પાઠ

इच्छा कारेण सदिसह भगवन् हरिया वदियं
 पडिक्कमामि इच्छ इच्छामि पडिक्कमिउं हरियाव-
 दियाए विराहणाए गमणागमणे पाणक्कमणे वीय-
 क्कमणे हरियक्कमणे उसा उतिंग पणग दग मट्टी
 मक्कड़ा सताणा सक्कमणे जे मे जीवा विराहिया
 एगिंदिया बेइंदिया तेइंदिया चउरिंदिया पंचिंदिया
 अभिहया वत्तिया लेसिया सघाइया सघट्टिया
 परियाविया किलामिया उदविया ठाण उठाण
 संकामिया जीवियाउ ववरोविया तस्स मिच्छामि
 दुक्कढ ॥

(१२)

५ च्यान शुद्धि पाठ

तत्स बह्वरी करण्यं पात्राच्छिद्य करणेयं विसर्पेदि
करण्यं विसर्पेदि करणेयं पात्राच्छिद्य करणेयं विसर्पेदि
कृताय ठाप्रमिद्यहसमा अमत्स बह्वस्तिपयं मिम
स्तिपयं क्वास्तिपयं च्वास्तिपयं अमत्सपयं वहुपयं
बाबमिसगोषं अमत्सिप विठमुच्यते सुदुमेदि अग
संवाचेदि सुदुमेदि लेख संवाचेदि सुदुमेदि दिष्टिपंवा-
लेदि एवमाहपदि । आगपरेदि अमगो अदिपदिह
हुत्स मे अहसगो वाब अदिपयं मगपंवायं नवो
अरेयं नगारेमि वाब अर्थ ठायेयं मायेयं म्पयं
अगयं बोधिपमि ॥

(३३)

६. अरिहंत स्तुति पाठ

लोगस्तु चञ्जोय गरे मग्ग मित्त्यगरे जिणो ।
अरिहंते कित्तइस्सं चट्ठीसंपि षेयली ॥ १ ॥
उत्तम मज्झिमं च वंदे सम्भय गमिणं दग्गं च सुमहं च ।
पवमप्पह सुपासं जिणं च चंदप्पह वंदे ॥ २ ॥
सुविदिं च पुप्फदंतं सीअल सिवजं च पासुपुज्जं च ।
विमल मणंतं च जिणं धम्मं सतिं च वदामि ॥ ३ ॥
कुन्धु अरं च मज्झि वंदे सुणि सुच्चय नमि जिणं च ।
वदामि रिद्धिनेमि पासं तह चद्धमाणं च ॥ ४ ॥
एवं मए अभिधुआ विट्ठयरयमला पहिणजरमरणा ।
चट्ठीसंपिजिणवरा तित्थयरा मे पसीयतु ॥ ५ ॥
कित्तिय वदिय महिया जेए लोगस्तु उत्तमासिद्धा ।
आरोगगवोदिलाभं समाहि वर मुत्तम दितु ॥ ६ ॥

८. सिद्ध अरिहंतों का स्तुति पाठ

नमोत्तुणं अरिहंताणं भगवंताणं आइगराणं
 तित्थयराणसयसबुद्धाणपुरिसुत्तमाणं पुरीससीहाणं
 पुरीसवरपुंढरियाणं पुरीसवरगन्ध हट्ठीणं लो-
 क्तमाणं लोगनाहाणं लोगहियाणं लोगपईवाणं
 लोगपज्जोयगराणं अभयदयाणं चक्खुदयाणं मग्गद-
 याणं सरणदयाणं जीवदयाणं बोहिदयाणं धम्मद-
 याणं धम्मदेसियाणं धम्मनायगाणं धम्मसारहीणं
 धम्मवरचाउरंते चक्कवट्ठीणं दिवोत्ताणं सरणगइप-
 इट्ठाणं अप्पहिइयवरनाणं दसणधराणविअट्ठल्ल-
 माणं जिणाणजावयाणं तिन्नाणतारयाणं बुद्धाणं
 बोहियाणं मुत्ताणं मोयगाणं सव्वन्नूणं सव्वदरिसिणं
 सिवमयलं मरुत्तयमणत्तं गक्खत्तयं सव्वधावाहं

८. सिद्ध अरिहंतों का स्तुति पाठ

नमोत्थुण अरिहंताणं भगवताण आइगराण
 तित्थयराणसयसबुद्धाणपुरिसुत्तमाण पुरीससीहाण
 पुरीसवरपुण्डरियाण पुरीसवरगन्ध हर्त्थाणं लोगु-
 त्तमाण लोगनाहाण लोगहियाण लोगपईवाण
 लोगपज्जोयगराण अभयदयाणं चक्खुदयाण मग्गद-
 याण सरणदयाण जीवदयाणं बोद्धिदयाण धम्मद-
 याण धम्मदेसियाण धम्मनायगाण धम्मसारहीण
 धम्मवरचाउरते चक्कवट्ठीण दिवोत्ताणं सरणगहप-
 इट्ठाण अप्पडिहयवरनाण दसणधराणविअट्ठच्छव-
 माण जिणाणजावयाणं तिन्नाणतारयाण बुद्धाणं
 वोहियाण मुत्ताण मोयगाण सव्वञ्जुण सव्वदरिसिण
 सिवमयल मरुत्तयमणत्त मक्खय मग्गवाह

मपुसर्ग्विधि विद्यागर्हं नमः सर्वे उग्र्य संपत्ताय नमो
विद्याय विद्यभार्या ॥

६. सामायिक पारने का पाठ

जबमां छायाधिक ज्ञान के विषय को कोई
अविचार लग्य हो वे में आखोड यत्र वचन कदा
क्य कोडा योग करछया, हो सामायिक में समता न
करी हो विना पूर्ण पारी हो १० यत्र के १० वचन के
१२ अर्थ के इन कहीस दोषों में से कोई दोष यत्र
लग्य हो वो वस्तु विच्छामि दुर्गर्ह ।

सामायिक करने की विधि

प्रथम त्नाम (जगाह) आसन, पूर्वमुखी मुख
बाहिना आदि की परिकेदवा कर पीछे जग्य अथवा
पूर्वक पूजकर आसन विज्ञाने फिर मुखबाहिन

(३७)

फी मुँह पर बाध कर आसनके पास खड़ा होकर
 मुनिराज के सम्मुख यदि मुनिराज विराजमान न
 हों तो पूर्व तथा उत्तर दिशा की ओर मुँह कर के
 दोनों हाथ जोड़ कर पंचांग नमा कर भगवान्
 श्रीसीगन्धर स्वामी जी महाराज की विधि युक्त
 तिक्युतो के पाठ से घंटना (नमस्कार) करके पहले
 अरिहंतों महर्देवों का पाठ पढ़ कर पीछे इरिया
 घहियाय का पाठ बोले, बाद तस्स उत्तरी का पाठ
 कह कर काउस्सग करें, काउस्सग में एक लोगस्स
 उज्जयोगरेका सम्पूर्ण पाठ बगैर ज्ञान हिलाये मन
 ही मन में पढ़े (बाद ^२ एक लोगस्स का पाठ प्रगट कहे)
 फिर ^१ नमो अरिहंताणं सिर्फ इतना ही कह कर
 ध्यान पारे । पीछे 'करेमि भंते' का पाठ पढ़ता
 हुआ जितने मुहूर्त करने हों उतने मुहूर्त कह पाठ

(२८)

पूर्ण कर लेवे बार सीने बैठ कर बायाँ गोड़ा
(घुटना) पकड़ कर दोनों हाथ जोड़ कर नमोत्पुर्ण
का पाठ दो बार करें । दूसरे नमोत्पुर्ण के अन्त में
जहाँ 'ठाणं सम्पत्तयं' आता है वहाँ 'ठाणं
संपादिष्ठ कामस्य' जोड़े फिर आसन पर बैठकर
सामायिक काक पूरा यही हो जब तक ज्ञान ध्यान
करे या पढ़ा हुआ ज्ञान पाए करे या जोड़ कर
जोड़का पड़े या बिचारे इत्यदि जर्म सम्पत्ती
ज्ञान ध्यान से सामायिक काक पूरा करे । गुरु
महाराज विराजमान हों तो उनके सम्मुख बैठे, पीठ
तक सम्मुख अन्तर्ग्राम आदि का उपदेश दे रहे
हैं तो इसमें उपयोग एकल । सामायिक काक मरह
पकरण विचारबलक न एकल । सामायिक में
सामायिक के कपीस बीच रहते ।

सामायिक पारने की विधि

सामायिक पारने के समय पढ़ने ईश्यात्रिंशत्पात्र का पाठ पढ़ फिर तन्म उपासी का पाठ पूर्ण पढ़ कर वात्रिंशत्पात्र करे । पात्रिंशत्पात्र में एक बार लोकार्त्त का पाठ सम्पूर्ण पढ़कर फिर, “नमो अरिहताय” इतना पढ़ कर ध्यान पारने फिर एक लोकार्त्त का पाठ प्रगट उच्चारण करे फिर ध्याया गोदा स्पर्श करके दोनों हाथ जोड़ पर दो नमोस्तुत का पाठ धोल पर नवमा सामायिक पारने का पाठ पढ़े पीछे तीन नव-कार मंत्र भी पढ़ ले ।

॥ इति ॥



चौदह नियम

१. सखिय—सखीय वस्तु

२. द्रव्य—खाद्य तथा पियम पकड़े खाने पीने की वस्तु

३. विगम—दूध, दही, पी तेक, भीर

४. पत्नी—बूझ, घोड़ा लड़ाई कौशल

५. तंबोळ—मुलगास सुगरी, पान बगीछ

६. बल—पहनने ओढ़ने के कपड़े

७. कुसुम—सू घने की वस्तु पूरा हय मसुक

८. काहन—चोका चोकी बहाल रेक, मोटर गाड़ी

९. शपथ—कात, पहांग, मिथोने

१०. विरोपस—तेक पीठी शरीर के कगाने की वस्तु

११. बम—महाबल, कुशीक की मर्बाता

१२. विराट—ऊँची नीची विराट्टी विराट

१३. पादक—स्वयम करमे, बल घोमे की वस्तुयें साधन

१४. भूतेषु—आहार पाणी का वजन

- क. पृथ्वीकाय—मिट्टी, लवण इत्यादि
 ख. अपकाय—पानी, जिवणि, टूँटी, परेंडे प्रमुख
 ग. तेजकाय—अग्नि, दीया, चूल्हा, चिलम
 घ. वायुकाय—हवा, पंखा, झूला
 ङ वनस्पतिकाय—सब्जी, फल, शाक
 च. त्रसकाय—हलते चलते जीव
 छ. असि—तलवार, छुरी, सुई, कैंची आदि
 ज. कृसि—खेती बाड़ी का सामान
 झ. मसि—दवात, कलम, काराज आदि

इन बातों की नित्य मर्यादा करना हर एक भाई का कर्ज है इससे सर्व लोक की अग्रत आनी बहुत बन्द हो जाती है जिससे जीव कर्मों से हलका होकर थोड़े ही काल में मोक्ष के परम सुख की प्राप्ति कर सकता है ।

दोपहर के व्याख्यान के पश्चात् पठनीय स्तवन

शीतल करना हुआ इत्या, इन्द्र सारे सेव हैं ।
 त्रैलोक्य रक्षा भी मोक्षगामी सो हमारे देव हैं ॥
 महाशक्त पारी व्याप्ताकारी जीव बड़ प्रविष्टकता ।
 गरुदेवमोटा बिबात्री छोटा हुआ सगले दासता ॥
 सब जीव रक्षा वाली कटीका धर्म जिनको जानिब ।
 जहाँ होत दिसा नहीं संशय, अपमर्ष पोरि पिछानिब ॥
 ये हीम रत्ना कीजो वस्त्रा शुद्ध बिन्दु सुधारिये ।
 बड़े बल्य सुनो मोक्ष, प्रथमो मै सार से ॥
 सक्त सार्व लक्षण पार्व, कटिनी नित्र दित आदिये ।
 प्रभु रामक छेड़ धर्म सेऊँ, वादीसो कल्याण है ॥

(५६)

पोषध व्रत लेने का पाठ

आर्यो षष्ठिपूर्णां पौष्य व्रत-शतमृतम् आदत्तं
 आदत्तं चार आदार मेवने का पशवत्याग अर्धभ चेर
 सेवने का पशवत्याग माक्षा वणरू निनेवन का
 पशवत्याग ऊरु मणि गुचरुं नार मुदाहादिक
 सायज्ज लोग का पशवत्याग जाय अहोरत पज्जु-
 वासामि दुविहं तिविहेणं न करेभि न कारयेभि
 मणमा पयमा कायमा तस्स भंते पटिणमाभिं
 निदामि गरिहामि अप्पाणं वोसिरामि ।



पौषध व्रत पारने का पाठ

ग्यारहों पौषध व्रत का पंच अक्षर्य अष्टमिभ्या
 न सम्यगारिभ्या तं ब्रूयात्, आक्षोभं अप्यङ्घ्रिहृदि
 दुष्पङ्घ्रिहृदि सेवा संचार्य अप्यमङ्घ्रिहृदि दुष्प मङ्घ्रिहृदि
 संजा संचार्य अप्यङ्घ्रिहृदिहृदि दुष्पङ्घ्रिहृदिहृदि क्वार
 पासक्य भूमि अप्यमङ्घ्रिहृदि दुष्पमङ्घ्रिहृदि क्वार पास
 क्य भूमि पौषहोचसस्तु कर्म अष्टुपात्रयाप वस्तु
 सिद्ध्यामि दुर्गम् ।



प्रथम वा अन्तिम तीर्थंकर वा सिद्धों की स्तुति

असिञ्चाउसाय नमः

प्रथम सिद्ध परमात्मा की स्तुति:—

(हरिगीत लंद)

तुम तरण तारण दुग्ग निवारण भविक जीव
आराधने, भी नाभिनन्दन जगज्ज पन्दन नमो सिद्ध
निरंजनं ॥१॥ जगत् भूषण विगत दूषण प्रवण प्राण
निरुपक, ध्यान रूप अनेप उपम नमो सिद्ध निरंजनं
॥ २ ॥ गगन मडक मुक्ति पदवी सर्व ऊर्ध्व निवासिनं
ज्ञान ज्योति अनंत राजे नमो सिद्ध निरंजनं ॥ ३ ॥
अज्ञान निद्रा विगत वेदन दलित मोह निरायुषं, नाम
गोत्र निरवराय नमो सिद्ध निरंजनं ॥४॥ विकट क्रोधा
मान योधा माया लोभ विसर्जन । राग द्वेष विमर्द

(४६)

अंशुर नमो सिद्ध निरंजन ॥ ५ ॥ विमान केवल ग्राम
 शोचन ध्यान शुद्ध समिष्टि, योगिना विगम्भु^{म्य} हर्ष
 नमो सिद्ध निरंजन ॥ ६ ॥ योग मे समोत्तरा सुहा
 परी पर्यवसासनं । सर्व हीसे तेज हर्ष नमो सिद्ध
 निरंजन ॥ ७ ॥ जगह दिनके दास दासी ताने^{सु} व्यास
 निरासनं चन्द्र वे परमानन्द हर्ष नमो सिद्ध निरंजन
 ॥ ८ ॥ स्व समभ समकित इष्टि विमन्त्री सोप पोयी
 आभोगिर्द । देखतानी कीम दोबे यमो सिद्ध निरंजन
 ॥ ९ ॥ तीर्थ सिद्ध अतीर्थ सिद्ध मेद पंच विरादिक,
 सर्व कर्म विमुख चैतन नमो सिद्ध निरंजन ॥ १० ॥
 चन्द्र सूर्य हीप मधि की ज्योति वेन बर्धकिर्द । ते
 ज्योतिभि अपरम ज्योति नमो सिद्ध निरंजन ॥ ११ ॥
 एक माहि अनेक राजे अनेक माहि पकिर्द एक अनेक
 की माहि संख्या यमो सिद्ध निरंजन ॥ १२ ॥ अजर

(४७)

अमर अलघ अतन्तर निरुत्तर निरंजन, परि मया
 ज्ञान अनंत दर्शन नमो सिद्ध निरंजन ॥१३॥
 अतुल गुण की लहर में प्रसु खीन रहे निरंतर, भग
 ध्यान भी सिद्ध दर्शन नमो सिद्ध निरंजन ॥१४॥
 ध्यान धूप मन पुष्प पंचेन्द्रिय हुतारान, दृग्मा जाप
 सन्तोष पूजा पूजो देव निरंजन, ॥ १५ ॥ तुम्हें शुक्ति
 दाता कर्म घाता दीन जानी दया करो, सिद्धार्थ
 नन्दन जगत वदन महावीर जिनेश्वरो ॥ १६ ॥



(४८)

शान्तिनाथ स्तुति

साधु कीजोभी श्री शान्तिनाथ प्रभु शिव सुख
हीनो भी ॥ १ ॥ शान्तिनाथ है स्वयं स्वयं
सब ने ख्यात जारी भी । तीस मयस में जाई प्रभु भी,
दृष्टि बिहारी भी ॥ १ ॥ आप सरीखा देव जगत में
और नजर नहीं आवे भी । त्यागी ने बिरहगो मोटा
मुझमें मायेजो ॥ २ ॥ शान्ति आप सब धर्म अपरा
आहे सो फल आवे भी । सब विचार्य हुकम दाखि
सब मित्र आवे भी ॥ ३ ॥ अरुखसेन राजा भी के
मन्दन अपरा देवी जाया भी । शुद्ध प्रसाद भीषम
करे, फल सुखा भी ॥ ४ ॥

(४६)

जिनदेव स्तुति

[तर्ज—ॐ जय जगदीश हरे]

ॐ जय जिनवर स्वामी जय जिनवर स्वामी । संकट
हरणम् शांति करणम् जयजिनवर स्वामी ॥१॥ सुख
करणम् दुःख हरणम् स्वामी तुम केवल ज्ञानी । चिंता
चूरण आशा पूरण अमृतसम बानी ॥ १ ॥ ॐ ॥ रोग
नशावे शोक मिटावे, विष अमृत होवे, जो ध्यावे
सुख पावे भव भव दुःख खोवे ॥२॥ ॐ ॥ नाम की
माला रटने वाला हो जावे आला । दीन दयालु तू
रखवाला भक्तन प्रतिपाला ॥ ३ ॥ ॐ ॥ अगणित
थारी महिमा भारी जाने नर नारी । नाथू मुनि ली
शरण चरण की करो मदद हमारी ॥ ४ ॥ ॐ ॥



शान्तिनाथ स्तुति

(तबे—जय बगतीरा हरे)

जय श्री शान्ति प्रभो स्वामी जय श्री शान्ति प्रभो ।
 संकट मोचन करिये सुनिसे विमय विमो । ॐ जय श्री
 शान्ति प्रभो । ठेक । इस्तिमगपुर में अग्ने स्वामी अचला
 के मन्दन । बिरबसेम कुछ दीपक प्रभु अमर करन ॥
 ॐ ॥ १ ॥ अमृत सुगी नरार्थ स्वामी शान्ति करी
 देया । अमर अमरपति करते चरण कमल सेवा ॥ ॐ
 ॥ २ ॥ शान्ति शान्ति महामन्त्र जो प्रेम वृक्ष ग्रावे । रोग
 शोक भय माये सुख वैभव पावे । ॥ ॐ ॥ ३ ॥ निर्मय
 नित्य निर्द्वन्द्व स्वामी आप अपूर् वेद्य । भवदधि प्रवह
 भंवर से पार करो बेड़ा ॥ ॐ ॥ ४ ॥ मक्ति माय से
 करता स्वामी 'सोदम' अधिमन्दम । प्रेमापण्य बगतीध
 स्वीकृत कर वन्दन ॥ ॐ ॥ ५ ॥

स्तोत्र शान्तिनाथजी का

श्री शान्तिनाथजी साता बतौई संसारजी,
 मन मोहन द्वारा जपतिया मंगलाचारजी ॥ श्री ॥१॥
 अश्वसैन नृप अचरा अंगज जाया शान्तिकुमार ।
 शान्ति थई सह्रु देशमें सकौई मृगोरोग निवारजी । श्री
 ॥२॥ धौ धौ धूप मप मादल बाजै, नाटक नां कनकार ।
 सुगुड़ सुजान सुघड़ जिनमहिमा बोलि रहा नर नार
 जी ॥ श्री ॥ ३ ॥ कामन टूमन टोट कास कोई खात
 खैन टंकार । ताव तेजारी निकट न आवे, तूठे
 शान्ति जिवारजी ॥ श्री ॥४॥ विष प्याला अमृत होई,
 प्रग में अग्नि होवे छार । द्वेपी दुश्मन चोर दास कोई
 नहीं आवे घर द्वारजी ॥ श्री ॥ ५ ॥ शान्ति नाम
 तावीज हिये लिख, भव दुख भंजन हार । मंगन
 शांतिता बतै निश दिन शान्ति उत्तारे पारजी ॥ श्री ॥६॥

उवसग हरण का पाठ

उवसग हरं पासं पसं बंदासि कल्प पक्ष मुक्कं ।
 बिछहर बिछ बिभासं मंगल कलाय भावासं ॥१॥
 बिछहर कुडिंग मंतं, बंटे बारैई जो सबा मणुषो ।
 उवस गह टोग थापी हुळ बरु बंदि उवसर्म ॥२॥
 बिछहर दूरे मंतो तुम्ह पय्यामो बिछहु पको होई ।
 भर छिरिपसु बिबीका पबंवि स हुंख होइला ॥३॥
 तुम सन्मते कसे बिन्तामणि कल्प राब बन्म दिव ।
 पबंवि अमिन्वेणु बीका अपणमरं ठाव ॥४॥
 इअ संवड महापस भविम्मणनिमरेण्हि अपस ।
 छानेव दिम्ह बोहि मये मये पस बिसपन्द ॥५॥
 बिबि—नीमद्रवाडु स्वामी मसादात् रर गोगकलपु

देस। प्रथम जोकर हर हमेशा उवाइस बार
 सत्ताइस टोक तक एक बिच से उवसग हरण का
 पाठ करें वो बसबा बपसगी मिटे और आई हुई
 आपदा दूर होवे ।

ॐ

सिद्धेभ्यो नमः.

पच्चीस बोले का थोकड़ा

पहिले बोले गति चार । दूसरे बोले जाति पाँच
तीसरे बोले काय छः । चौथे बोले इन्द्रिय पाँच ।
पाँचवें बोले पर्जा (पार्श्व) छः छः । छठे बोले प्राण
दश । सातवें बोले शरीर पाँच । आठवें बोले योग
(जोग) पन्द्रह । नवें बोले उपयोग बारह । दशवें
बोले कर्म आठ । ग्यारहवें बोले गुणठाणा १४ ।
बारहवें बोले पाँच इन्द्रियों के तेईस विषय । तेरहवें
बोले मिथ्यात्व के दश बोले । चौदहवें बोले छोटी
नवतत्त्व के ११५ भेद । पन्द्रहवें बोले आत्मा आठ ।
सोलहवें बोले दण्डक चौत्रिस । सत्रहवें बोले लेश्या

४ । अठारहवें बोले दष्टि तीन । जन्नीसवें बोले ध्येय
चार । बीसवें बोले बह्मर्ष के तीस भेद । इक्कीसवें
बोले दृष्टि दो । बाईसवें बोले भाषण के अष्ट प्रभ ।
तेईसवें बोले साधुजी के पाँच महाप्रभ । चौबीसवें
बोले गुरुपरास भागों का कामपन्ना । पचीसवें बोले
चारित्र्य पाँच ।

पहिले बोले गतिः ४—आत्मगति, तिर्यक्-
गति, मनुष्यगति, देवगति ।

दूसरे बोले आतिः ५—एकेन्द्रिय आति,
द्वेन्द्रिय आति, त्रेन्द्रिय आति, चतुरिन्द्रिय
आति, पंचेन्द्रिय आति ।

१ गति किसको कहते हैं ? गतिनामा आत्म कर्म
के उद्भव से जीव की पर्यावनिरोध का गति कहते हैं ।

२. जाति किसको कहते हैं ? अनेक व्यक्तियों में एकपने की प्रतीति कराने वाले समान धर्म को जाति कहते हैं । जैसे—काली, पीली, नीली गायों में गोपन एक है । अर्थात् काली गाय कहने से भी उसमें गोपन है, वैसे ही पीली और नीली कहने से भी ।

तीजे बोले कायः छः—पृथ्वीकाय, अपकाय, तेउकाय, वाउकाय, वनस्पतिकाय, व्रसकाय ।

१ काय किसको कहते हैं ? व्रस स्थावर नाम-कर्म के उदय से जीव जिस पिंड (शरीर) में उत्पन्न हो उसे काय कहते हैं ।

(१) पृथ्वी काय—मिट्टी हींगलु, हड़ताल, मोडल, पत्थर, हीरा, पन्ना आदि सात लाख योनि हैं । आयुष्य लघन्य अन्तर्मुहूर्त की उत्कृष्ट शुद्ध

(२६)

पृथ्वीकाय की १२ इञ्चार बर्ष की भीर कर पृथ्वी
काय की २२ इञ्चार बर्ष की है । एक कॉइरे में
असंख्यता जीव भी मगधन्त ने करमाया है ।
पृथ्वी काय का बर्ष पीछा है । स्वभाव कठोर है ।
संठाण मसूर की दाह के आधार है । पृथ्वीकाय की
१२ अज कुल कोकी है । एक पर्य्याप्त की नैसर्ग
असंख्यता अपर्षाता है ।

(२) अपृथ्वीक—बरसात का पानी ओस का
पानी गन्ध का पानी, समुद्र का पानी सुँबर का
पानी कुँवा-बाबड़ी का पानी, यदि बेहने साथ
हाल पोति है । आधुन्य अथम् अन्तर्मुहूर्त भीर
अन्तर्गत सत इञ्चार बर्ष की है । एक पानी की बन्ध
में असंख्यता जीव भी मगधन्त ने करमाया है ।
एक पर्य्याप्त की नैसर्ग असंख्यता अपर्षाता है ।

(५७)

अपकाय का वर्ण लाल है। स्वभाव ठोका है।
संठाण पानी के परपोटे धूमिले माफिक है। अपकाय
की ७ लास कुल कोड़ी हैं।

(३) तेजकाय (तेजस्काय)-अग्नि, माल की
अग्नि, बिजली की अग्नि, घाँसकी अग्नि, उल्कापात
आदि देइने मात लास योनि हैं, आयुष्य लघन्य
अन्तर्मुहूर्त की और उत्कृष्ट तीन रात दिन की है।
एक अग्नि की चिन्गारी में असंख्याता जीव श्री
भगवन्त ने फरमाया है एक पर्याप्त की नेसराय
असंख्याता अपर्याप्ता हैं। तेजकाय का वर्ण सफेद
है। स्वभाव उष्ण (गर्म) है। संठाण सुई की
भारे के माफिक है। सुई की तरह अग्नि की माल
नीचे से मोटी ऊपर से पतली। तेजकाय की तीन
लास कुल कोड़ी हैं।

(५६)

आदि देहने १० लाख जाति हैं । कन्दमूल की जाति को साधारण वनस्पति कहिये, जैसे लशान, सकरकदी, अद्रक, आलू, रतालू, मूली, नीलीहल्दी, गाजर, लीलाण, फूलण आदि देहने १४ लाख योनि हैं । आयुष्य जघन्य अन्तर्मुहूर्त की, उत्कृष्ट १०००० वर्ष की है ।

कन्दमूल—एक सुई के अग्रभाग में असंख्याता श्रेणी हैं । एक एक श्रेणी में असंख्याता प्रतर हैं । एक एक प्रतर में असंख्याता गोला हैं । एक एक गोला में असंख्याता शरीर हैं । एक एक शरीर में अनन्ते जीव हैं । निगोद का आयुष्य जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त का, चवे और उपने ।

त्रसकाय—जो जीव हाले चाले, छाया से घूप में आवे और घूप से छाया में जावे उसको त्रसकाय

कहते हैं। इसको चार भेद—बेहमित्रिय तेशमित्रिय चर
 रिमित्रिय पंचेमित्रिय। (१) बेहमित्रिय एक काया दूसरा
 मुख ये दो शमित्रियाँ जिसके हों, इसको बेहमित्रिय
 कहते हैं। जैसे राहू कोकी सीप, कट कीकट, अन्न
 छिप्रा कुमि (चूरखीन्ना), आदि देकर १ काक पोनि
 हैं। बेहमित्रिय की ७ काक कुच कोकी हैं। आधुप्य
 अण्य अण्णमु हूर्त अण्ण वारह बर्ब की है। (२)
 तेशमित्रिय—एक काया दूसरा मुख, तीसरा नाक,
 यह तीन शमित्रियाँ जिसके हों इसको तेशमित्रिय कहते
 हैं। जैसे—बूँ लीक पांचर मक्क कीका कुमुपा
 मकोका अण्णमु आदि देकर १ काक पोनि हैं।
 तेशमित्रिय की ३ काक कुच कोकी हैं। आधुप्य अण्य
 अण्णमु हूर्त की अण्ण गुणपपास निज की है। (३)
 चरिमित्रिय—एक काया दूसरा मुख, तीसरी नाक

चौथी आँख, ये चार इन्द्रियाँ जिसके हों उसको चरिन्द्रिय कहिये । जैसे मक्खी, डाँस, मच्छर, ममरा, टोही, पतंगा आदि २ लाख योनि हैं, आयुष्य जघन्य अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट छमास की, चरिन्द्रिय की ६ लाख कुल कोटी हैं । (४) पंचेन्द्रिय—एक काया, दूसरा मुख, तीसरी नाक, चौथी आँख, पाँचवा कान, यह पांच इन्द्रियाँ जिसके हों उसको पंचेन्द्रिय कहिये, जैसे—गाय, भैंस, बैल, हाथी, घोड़ा, मनुष्य आदि देने २६ लाख (४ लाख देवता, ४ लाख नारकी, ४ लाख तिर्यञ्च, १४ लाख मनुष्य) योनि हैं । आयुष्य नारकी जघन्य दस हजार वर्ष की, उत्कृष्ट ३३ सागरोपम की । तिर्यञ्च की ज० अन्तर्मुहूर्त, उत्कृष्ट तीन पत्न्योपम की । देवता की जघन्य दस हजार वर्ष की, उत्कृष्ट ३३ सागरोपम की ।

(६२)

वंचेन्द्रिय की (११६५००००) एक कोड़ धाने घोकर
 सात कुल कोड़ी हैं । कुल कोड़ी का सुझाव इस
 प्रकार है—सूरकी की २५ सात कुल कोड़ी हैं, रेवड़
 की २६ सात विर्चन वंचेन्द्रिय लकड़र की १२।
 सात स्वधर की १० सात, लोचर की १२ सात,
 तरपरिचर्प की १० सात मुलपरिचर्प की ६ सात
 मनुष्य की १९ सात कुल कोड़ी हैं । कुल कीड़ी किस
 को कहते हैं ? कुलों के प्रकार (भेद) को कुल कोड़ी
 कहते हैं । जैसे अमुक प्रकार के रूप-रसदि वाले
 परमाणुओं से बने हुये हो वह कुल का एक प्रकार,
 उससे भिन्न प्रकार के रूप-रसदि वाले परमाणुओं से
 बने हुये हो वह दूसरी प्रकार । इस तरह अमुक
 प्रकार के परमाणुओं के विचारजन्य हैं कुलों के भेद
 होते हैं । अर्थात् जैसे एक धागे (चोपले) में बीज के

कुल बहुत उपजते हैं जैसे ही पंचेन्द्रिय में भी बहुत
 कुल उपजते हैं उसको कुल कोटो कहते हैं ।

एक मुहूर्त में एक वीथ उत्कृष्ट कितने भव करता
 है—पृथ्वीकाय, अप्काय, तेजकाय, याउकाय, एक
 मुहूर्त में उत्कृष्ट १२८२४ भव करे । वादर घनस्पति-
 काय एक मुहूर्त में उत्कृष्ट ३२००० भव करे । सूक्ष्म
 घनस्पति एक मुहूर्त में उत्कृष्ट ६५५३६ भव करे ।
 वेदन्द्रिय एक मुहूर्त में उत्कृष्ट ८० भव करे । तेशन्द्रिय
 एक मुहूर्त में उत्कृष्ट ६० भव करे । चरित्रन्द्रिय एक
 मुहूर्त में उत्कृष्ट ४० भव करे । अमन्त्री पंचेन्द्रिय
 एक मुहूर्त में उत्कृष्ट २४ भव करे । सन्त्री पंचेन्द्रिय
 एक मुहूर्त में १ भव करे ।

छाया का अल्पबहुत्व

सब से कम प्रस काय, उससे तेजकाय, असंख्यात

(६४)

गुणो, उससे दृग्धी अथ विरोधाधिक (दृग्गुणे से दृग्ध
अधिक) उससे अपक्षय विरोधाधिक उससे
बाधुकाय विरोधाधिक उससे वयस्यविशेष अमन्य
गुणो हैं ।

अकाय का विशेष स्वरूप

(१) इन्द्रबाधरकाय (२) ब्रह्मबाधरकाय (३)

सिन्धुबाधरकाय (४) सुमतिबाधरकाय (५) पञ्चम
बाधरकाय और (६) अंगमकाय ।

(१) इन्द्रबाधरकाय का इन्द्र देवता मायिक है इस
लिये इसे इन्द्रबाधरकाय कहते हैं ।

(२) अपक्षय का महा देवता मायिक है इसे
ब्रह्मबाधरकाय कहते हैं ।

(३) तेजकाय का शिखी नामक देवता स्वामी है
इसलिये इसे सिन्धुबाधरकाय कहते हैं ।

(६५)

चौथे बोले इन्द्रियः ५—श्रुत इन्द्रिय,
चक्षुः इन्द्रिय, घ्राणेन्द्रिय, रसना इन्द्रिय,
स्पर्श इन्द्रिय ।

(४) वायुकाय का सुमति नामक देवता मालिक है इसलिये इसे सुमतिधावरकाय कहते हैं ।

(५) वनस्पति काय का प्रजापति मालिक है इसलिये इसे पयावक्षथावरकाय कहते हैं ।

(६) त्रसकाय का जंगमनामा देवता मालिक है इसलिये इसे जगमकाय कहते हैं ।

१ इन्द्रिय किसको कहते हैं ? जीव तीन लोक के ऐश्वर्य से सम्पन्न है इसलिये इसे इन्द्र कहते हैं । उस इन्द्र (जीव) के चिन्ह को इन्द्रिय कहते हैं, अर्थात् इन्द्रिय से जीव पहचाना जाता है, जैसे स्पर्शन

पाँचवें बोले पर्याप्त (पर्याप्ति) छः—आहारपर्याप्ति, शरीरपर्याप्ति, इन्द्रियपर्याप्ति, सासो-सास (स्वासोच्छ्वास) पर्याप्ति, माया पर्याप्ति (बन्धनपर्याप्ति), मना पर्याप्ति ।

इन्द्रिय से एकेन्द्रिय—बुद्धादि—जीव पहचाने जाते हैं । जो इन्द्रिय (स्पर्श रसना) से वेइन्द्रिय जीव छः भादि पहचाने जाते हैं इत्यादि ।

• पर्याप्ति किसको कहते हैं ? आहार बर्गका, शरीर बर्गका इन्द्रियबर्गका स्वासोच्छ्वासबर्गका, मायाबर्गका और मनोबर्गका के परमायुधों के शरीर, इन्द्रिय आदि रूप में बरिखयाने की शक्ति की पूर्णता को पर्याप्त (पर्याप्ति) कहते हैं ।

छठे बोले प्राणः १०—श्रुतेन्द्रिय बल-
प्राण, चक्षुरिन्द्रिय बलप्राण, घ्राणेन्द्रिय बलप्राण,
रसेन्द्रिय (रसनेन्द्रिय) बलप्राण, स्पर्शनेन्द्रिय
बलप्राण, मनोबलप्राण, वचनबलप्राण, कायबल
प्राण, सासोसास (श्वासोच्छ्वास) बलप्राण,
आयुष्यबलप्राण ।

सातवें बोले शरीरः ×—उदारिक (औ-

ॐ प्राण किस को कहते हैं ? जिनके संयोग से
यह जीव जीवन अवस्था को प्राप्त हो और वियोग
से मरण अवस्था को प्राप्त हो उनको प्राण कहते हैं ।

× शरीर किस को कहते हैं ? जिसमें प्रति क्षण
शीर्ण जीर्ण होने का धर्म हो तथा शरीर नाम कर्म के
उदय से उत्पन्न होता हो उसे शरीर कहते हैं ।

हारिक), वैक्रिय (वैक्रिय), आहारिक, १ वैक्रिय
(वैक्रिय), कर्मधार ।

(१) कर्तारिक शरीर किसे कहते हैं ? मनुष्य विर्यम्ब के स्वरूप शरीर को कर्तारिक शरीर कहते हैं । तथा हाथ मांस कोट्ट, एव जिसमें हो वसको कर्तारिक शरीर कहते हैं । इसका स्वरूप गन्तव्य, सक्ता विर्यम्ब (विचार) होता है ।

(२) वैक्रिय शरीर किसे कहते हैं ? जिसमें छोटे बड़े अनेक अवि नाग मकार के रूप बन्धने की शक्ति हो वसे वैक्रिय कहते हैं । तथा वेव और मारकी के शरीर को वैक्रिय कहते हैं । अथवा जिसमें हाथ, मांस कोट्ट, एव नहीं हो वस मरने के बाद अपूर की तरह बिलर अथ वसको वैक्रिय शरीर कहते हैं ।

(३) आहारिक शरीर किसे कहते हैं ? बड़े

(६६)

गुणस्थानवर्ती मुनि के तत्त्वों में कोई शंका होने पर तीर्थकर महाराज या केवली महाराज के निकट जाने के लिये शरीर में से जो एक हाथ का पुतला निकलता है, (कोई लब्धिधारी मुनिराज अप्रमाद करने ज्ञान भण्डा प्रमाद करने पर ज्ञान विसर्जन हो गया हो और कोई पुरुष आकर प्रश्न पूछे उस वक्त मुनिराज का उपयोग लागे नहीं जद अपने शरीरमें से एक हाथ का पुतला निकाले, उस पुतले को जहा तीर्थकर महाराज या केवली महाराज होवें वहा भेजे, वहाँ से तीर्थकर महाराज या केवली महाराज बिहार कर गये हों तब वहाँ पर उस एक हाथ के पुतले में से मुँहे हाथ का पुतला निकले जहाँ पर तीर्थकर महाराज व केवली महाराज होवें वहाँ पर जाकर प्रश्न का उत्तर लेकर मुँहे हाथ का

पुच्छा एक हाथ के पुच्छों में प्रवेश करे और एक हाथ का पुच्छ मुनिपत्र के शरीर में प्रवेश करे तब मुनिपत्र के शरीर में प्रवेश करे तब मुनिपत्र प्ररन का कट्टर है । मुनिपत्र आहारिक की दृष्टि छोड़े (पुच्छा निष्करो) उसकी व्याख्याना किने और निपत्रक और व्याख्याना करते तो व्यापक लगे आहारिक शरीर करते हैं ।

(४) वैजस शरीर किसे कहते हैं ? महक निचे हुए व्यापार को बचाने कसको वैजस शरीर कहते हैं ।

(५) कर्मण्य शरीर किसे कहते हैं ? ज्ञान बरखी व्यापि अत्र कर्मों के समूह को कर्मण्य कर्म के लक्षाने को कर्मण्य शरीर कहते हैं ।

संघाटी बीच के वैजस कर्मण्य शरीर हर वय प्राय ही रहते हैं ।

आठवें घीले जोग (योग) १५—१ सत्य-
मनोयोग, २ असत्य मनोयोग, ३ मिथ मनो-

१. जोग (योग) किसको कहते हैं ? मन वचन
काया के व्यापार से होने वाला जो आत्मा का परि-
णाम उसको योग कहते हैं । योग के २ भेद होते
हैं—१ भावयोग, २ द्रव्ययोग । भावयोग किसको
कहते हैं ? पुण्ड्रलविपाकी शरीर और अगोपांग
नामकर्म के उदय से मनोवर्गणा वचनवर्गणा काय-
वर्गणा के अवलम्बन से कर्म नोकर्म को ग्रहण करने
की जीव की शक्ति विशेष को भावयोग कहते हैं ।
द्रव्ययोग किसको कहते हैं ? इसी 'भाव' योग के
निमित्त से आत्मप्रदेश के परिस्पन्द (चंचल होने)
को द्रव्ययोग कहते हैं ।

योग, ४ व्यवहार मनोयोग, ५ सत्य भाषा, ६ असत्य भाषा, ७ मित्र भाषा, ८ व्यवहार भाषा
 ९ औदारिक, १० औदारिक मित्र, ११ वैक्रिय,
 १२ वैक्रिय मित्र, १३ आहारक, १४ आहार-
 क मित्र, १५ कर्मण योग ।

तर्के बोले उपयोगः १२—पाँच ज्ञान,
 तीन ज्ञान, चार दर्शन । ज्ञान ५—मच्छिज्ञान,
 भुतज्ञान, अवधिज्ञान, मनापर्यायज्ञान, केवल-
 ज्ञान । अज्ञान ३—मति अज्ञान, भुत अज्ञान,
 विमर्गअज्ञान । दर्शन ४—बहुदर्शन, अपबहुदर्शन,
 अवधिदर्शन, केवल दर्शन ।

२. उपयोग किसको कहते हैं ? सामान्य विशेष
 रूप से वस्तु का आवृत्ति उसे उपयोग कहते हैं ।

(७३)

दसवें बोले कर्म, ८—१ क्षानावरणीय,
२ दर्शनावरणीय, ३ वेदनीय, ४ मोहनीय, ५
आशु, ६ नाम, ७ गोत्र, ८ अन्तराय ।
ग्यारहवें बोले गुणठाणा १४—१ मि-

थ्यात्वगुणठाण, २ सास्वादानगु०, ३ मिश्रगु०

१. कर्म किसको कहते हैं ? जीव के राग-द्वेषादिक
परिणामों के निमित्त से कर्मणवर्गणारूप पुद्गल-
स्कन्ध जीव के साथ बन्ध को प्राप्त होते हैं, उनको
कर्म कहते हैं ।

२ गुणठाणा किसको कहते हैं ? मोह और
योग के निमित्त से सम्यग्दर्शन और सम्यक्चरित्र
रूप आत्मा के गुणों की तारतम्यरूप (हीनाधिकता-
रूप) अवस्था विशेष को गुणठाणा कहते हैं ।

४ अनिरतिसम्पत्तिगु०, १ देशविरसिमादकगु०,
 ६ प्रमादीसाधुगु०, ७ अप्रमादीसाधुगु०, ८
 नियङ्गीबादर गु०, ९ अनियङ्गीबादर गु०, १०
 प्रथमसम्परायगु०, ११ उपशान्तमोहनीयगु०,
 १२ स्त्रीमोहनीयगु०, १३ सपोमी केवलीगु०,
 १४ अयोगी केवलीगु ।

बारहवें बोले पाँच इन्द्रियों के छह विषय
 और २४ विकार । भोज्येन्द्रिय के ३ विषय—

१ इन्द्रियों के विषय किसे कहते हैं ? विषयों
 इन्द्रियों कागती हैं उन्हें इन्द्रियों के विषय कहते हैं ।

मरन्येत्तर-शरीर से आदय क्या ? रंग की एही ।
 सुहाय क्या ? गन्ध का ताजवा । मारी क्या ? स्पर्श ।
 दृश्य क्या ? चेरा । ठंडा क्या ? कषय की बोझ ।

उष्ण क्या ? कालजा । चीकना क्या ? आँख की
 कीकी । लूसा क्या ? जीभ । इन्द्रियों के २४० विकार
 होते हैं वे इस प्रकार श्रुतेन्द्रिय के १२ विकार ।
 १ जीवशब्द, २ अजीवशब्द, ३ मिश्रशब्द, ये ३
 शुभ और ३ अशुभ । इन ६ ऊपर राग और ६ ऊपर
 द्वेष इस प्रकार १२ । चक्षुरिन्द्रिय के पाँच विषयों के
 ६० विकार—५ सचित्त, ५ अचित्त, ५, मिश्र, ये १५
 शुभ और १५ अशुभ, इन ३० ऊपर राग और ३०
 ऊपर द्वेष इस प्रकार ६० । घ्राणेन्द्रिय के दो विषयों
 के १२ विकार—२ सचित्त, २ अचित्त, २ मिश्र, इन
 ६ ऊपर राग और ६ ऊपर द्वेष इस प्रकार १२ ।
 रसनेन्द्रिय के पाँचों विषयों के ६० विकार—५
 सचित्त, ५ अचित्त, ५ मिश्र, १५ शुभ और १५ अशुभ
 इन ३० ऊपर राग और ३० ऊपर द्वेष, इस प्रकार

१ जीवशब्द, २ अजीवशब्द, ३ मिथशब्द ।
 गन्धेन्द्रिय के ३ विषय—१ कांसा, २ नीला,
 ३ लाल, ४ पीला, ५ श्वेत । घ्राणेन्द्रिय के २
 विषय—१ सुरमिगन्ध, २ दुरमिगन्ध । रसने-
 न्द्रिय के ५ विषय—१ तीखा, २ कड़वा, ३
 कषायला, ४ स्वादा, ५ मीठा । स्पर्शेन्द्रिय
 के ८ विषय—१ तरवरा, २ घुहाहा, ३ मारी
 ४ हलका, ५ ठण्डा, ६ उष्ण, ७ सूखा, ८
 चीकना ।

६ ॥ स्पर्शेन्द्रिय के आठों विषयों के १६ विकार—
 ८ स्थिति ८ अस्थिति ८ भिन्न वे १४ गुण और १४
 अगुण इन ४८ ऊपर राग और ४८ ऊपर द्वेष इष्ट
 प्रकर्ष १६ । कुल १४० विकार ।

तेरहवें बोले मिथ्यात्व के १० भेद—

१ जीव को अजीव श्रद्धे तो मिथ्यात्व, २ अजीव को जीव श्रद्धे तो०, ३ धर्म को अधर्म श्रद्धे तो० ४ अधर्म को धर्म श्रद्धे तो०, ५ साधु को असाधु श्रद्धे तो०, ६ असाधु को साधु श्रद्धे तो०, ७ संसार के मार्ग को मोक्ष का मार्ग श्रद्धे तो०, ८ मोक्ष के मार्ग को संसार का मार्ग श्रद्धे तो०, ९ आठ कर्मों से मुकाणा (मुक्त) को अमुकाणा (अमुक्त) श्रद्धे तो०, १० आठकर्मों से अमुकाणा (अमुक्त)

१. मिथ्यात्व किसको कहते हैं ? कुदेव, कुगुरु, कुधर्म और कुशास्त्र पर श्रद्धान (विश्वास) करना, उसको मिथ्यात्व कहते हैं।

को मु काशा (मुक्त) बड़े तो मिथ्यात्व ॥

बीदहर्ष बोले छोटी नवतत्व के ११५ में
नवतत्वों के नाम—

१ बीदतत्व, २ अजीवतत्व, ३ पुण्यतत्व,

१ बीदतत्व किसे कहते हैं ? बीद वेतन्यलक्ष्य
व्ययोग लक्ष्य मुक्त मुक्त का वेद, वर्तमान माण्ड
का वर्तमान आठ कर्मों का कर्तव्य और मोक्ष सदाचार
राज्यता रहे वद्विपि किसी नहीं और अमलकता
मनेरी हो वद्विपि बीदतत्व कहते हैं तथा वह बीद
ज्ञान दर्शन, मुक्त और बीद इस बार माण्ड माण्डों
से गद्य काल में बीद, वर्तमान काल में बीद है
और व्याख्या करके इन्हीं बार माण्ड माण्डों से बीदेगा
इस विषय इसको बीद कहते हैं । बीद के मुख्य दो

४ पोषतत्व, ५ आश्रवतत्व, ६ संवरतत्व,
 ७ निर्जरातत्व, ८ वन्धतत्व, और ९ मोक्षतत्व ।
 जीव के १४, अजीव के १४, पुण्य के ६,
 पाप के १८, आश्रव के २०, संवर के २०,
 निर्जरा के १२, वन्ध के ४, मोक्ष के ४ ।
 कुल ११५ भेद ।

जीव के १४ भेद

सूक्ष्म एकेन्द्रिय के २ भेद-अप्रजापता और प्रजापता
 वादर एकेन्द्रिय के " " "

भेद होते हैं—संसारी और सिद्ध । संसारी जीव
 किसे कहते हैं ? जो कर्म सहित है उसे संसारी कहते
 हैं । जो ज्ञानावरणादि आठ कर्म रहित है उसे सिद्ध
 जीव कहते हैं ।

बेहन्निय	के १ मेद-अप्रमापता और प्रमापता		
तेहन्निय	के " " "	"	"
पठरिन्निय	के " " "	"	"
असभी पंचन्निय के	" " "	"	"
सभी पंचेन्निय के	" " "	"	"

अभीष्ट के १४ मेद—

धर्मास्तिकाय के तीन मेद—स्वध, दश और प्रदेश । आधर्मास्तिकाय के तीन मेद—स्वध, देश और प्रदेश । अक्राशास्तिकाय के तीन

१ अभीष्ट किसको कहते हैं ? अभीष्ट—

बेधमरहित सुख दुःख को नष्ट करी, वर्तमान प्राण भाग बचवाग और व्यर्थ कर्मों से रहित और अद्वय उदररहित हो बतों अभीष्ट कहते हैं ।

भेद—खंघ, देश और प्रदेश । ये नव और दशवाँ काल । ये दश भेद अरूपी अजीव के जानना । रूपी पृथ्वी के चार भेद—१ खंघ, २ देश, ३ प्रदेश और ४ परमाणुपृथ्वी । ये चौदह भेद अजीव के हुए ।

१पुण्य के ६ भेद

१ अन्नपुण्य—अन्न देने से पुण्य होता है ।

१. पुण्य किसको कहते हैं ? जो आत्मा को पवित्र करे तथा जिसकी प्रकृति शुभ, जो पांथता दोहिला, भोगवता सोहिला, दुखे दुखे बांधे, सुखे सुखे भोगवे, शुभ जोग से बांधे शुभ उज्ज्वल पृथ्वी का बांध पाड़े पुण्य धर्म का सहायक तथा पथ्यरूप है । जिसका फल मीठा हो उसे पुण्य कहते हैं ।

६ नमस्कारपुण्य—नमस्कार करने से पुण्य० ।

उपरोक्त नव प्रकारे पुण्य बांधे और ४२ प्रकारे

भोगवे ।

१ पुण्य कर्म भोगने की ४२ प्रकृति इस प्रकार हैं—आयुष्य कर्म की ३ (देवायु मनुष्यायु, और तिर्यञ्च का लम्बा युगलिया में आयु), वेदनीय की एक (सातावेदनीय), नाम कर्म की ३७ (१ मनुष्य गति, २ मनुष्य की आनुपूर्वी, ३ देव गति, ४ देव आनुपूर्वी, ५ पंचेन्द्रिय जाति, ६ औदारिक शरीर, ७ वैक्रिय शरीर, ८ आहारिक शरीर, ९ तैजस शरीर, १० कर्मण शरीर ११ औदारिक का अंगोपांग, १२ वैक्रिय का अंगोपांग १३ आहारिक का अंगोपांग, १४ ब्रह्मचर्यभनाराच-सघयण, समचवरस संठाण (समचतुरस्र), १६

(८४)

शुभ वर्यो, १७ शुभ गन्ध १८ शुभ रस, १९ शुभ
 पद, (लक्ष्मी), २० अगुणकाम शुभ, २१ पद्यपाठ
 नाम २२ वज्रवास शुभ, २३ आचार शुभ, २४
 वयोव शुभ, २५ शुभ विहायोगदि शुभ, २६ निर्माह
 नाम, २७ सीर्षक शुभ, २८ वस शुभ २९ वार
 नाम ३० पर्वणि शुभ ३१ मत्प्रेक्ष शुभ ३२ त्विर
 शुभ ३३ शुभ नाम ३४ सीमान्त शुभ ३५ शुभर
 शुभ ३६ आदेश (आदेश) शुभ ३७ वरा (वीरि)
 शुभ गोत्रकर्म की १ (अंगगोत्र) शुभ ४९ ।

पाप के १८ मेह

१ प्रत्यातिपात—भीषों की दिस करण ।

१ यय किछको कहते हैं १ को आस्थ को
 महीन करे तथा को नावछ सोहिजा, योग्यता

- २ मृपावाद—अमत्य झूठ बोलना ।
- ३ अदत्तादान—अणदीधी वस्तु का लेना चोरी
- ४ मैथुन—कुशील का सेवन ।
- ५ परिग्रह—द्रव्य आदि रखना, ममता करना ।
- ६ क्रोध—अपने आप तपना, दूसरे को तपाना और
क्रोध करना ।
- ७ मान—अहंकार (घमंड) करना ।
- ८ माया—कपटाई, ठगाई करना ।
- ९ लोभ—वृष्णा बढ़ाना, मूर्च्छा (गृद्धिपणा) रखना ।

दोहिला, अशुभ योग से बंधे, सुखे सुखे, दुखे दुखे
भोगवे, पाप अशुभ प्रकृति रूप है, जिसका
फल कड़वा, जो प्राणी को मैला करे उसे पाप कहते
हैं ।

- १० राग—सोह रसना घीघि करना ।
- ११ द्वेष—अप्यगमती वस्तु पर द्वेष करना ।
- १२ क्लृप्त—कलेरा करना ।
- १३ अम्याम्यान—मूठ कर्क (अन्न) काटना ।
- १४ वैशुन्य—दूधरे की चुम्बी करना ।
- १५ परपरिवाद—दूसरे का अपर्याय (निन्दा)
बोझना ।
- १६ रतिभरति—संभों इन्द्रियों के लेईस बिचकों
में से अगमती वस्तु पर भराव
होना ।
- १७ मायामुपावाद—कनह खादिय मूठ बेकल,
कपटार्ई में कपटार्ई करना ।
- १८ मिथ्यादर्शनशून्य—कुरेव, कुगुब बीर
कुमर्म पर भ्रमा रक्षण ।

पाप १८ प्रकारेः बांधे और ८२ प्रकारे भोगवे ।

१. पाप कर्म भोगने की ८२ प्रकृति इस प्रकार हैं—ज्ञानावरणीय की ५ (मतिज्ञानावरणीय १, श्रुतज्ञानावरणीय २, अवधि ज्ञानावरणीय ३, मनः पर्ययज्ञानावरणीय ४, केवल ज्ञानावरणीय ५, दर्शनावरणीय की ६ (निद्रा १, निद्रानिद्रा २, प्रचला ३, प्रचलाप्रचला ४, थीणद्धी ५, चक्षुदर्शनावरणीय ६, अचक्षुदर्शनावरणीय ७, अवधि दर्शनावरणीय ८, केवल दर्शनावरणीय ९), वेदनीय की १, (असाता वेदनीय), मोहनीय की २६ (मिथ्यात्व-मोहनीय, अनन्तानुबन्धी-क्रोध मान माया लोभ । अप्रत्याख्यानावरणीय-क्रोध मान माया लोभ । प्रत्याख्यानावरणीय-क्रोध मान माया लोभ । संवत्सन-

कोष मान माया खोम । नर मो कषाय—हारव रति,
 अरति, शोक मय गुगुब्बा, जीवेद, पुठववेद
 मपु सफवेद १६), आधुप्य की १ (धारकी क
 आधुप्य) नम कर्म की ३४ (नरकगति १, विर्बन
 गति २, एकेन्द्रियपन ३, वेदन्द्रियपन ४ वेदन्द्रियन
 ५, नरतिन्द्रियपन ६ अयमनयपन संवकस ७,
 नायन संवकस ८, अर्धनायन संवकस ९, कीर्तिक
 संवकस १ जेवद (खेवाटी) संवकस ११, न्योव
 परिमस्वक संठाक १२, धारीसंठाक १३ नामय
 संठाक १४ दुवज संठाक १५, दूयक संठाक १६
 अयमनय १७ अयमनय १८, अयमनय १९,
 अयमनय २० नरकमुपूची २१ विर्बनयपूची
 २२ अयमनय की गति २३, अयमनय २४
 न्यावर न्याम २५, सुख न्याम २६ अयमनय २७

आस्रव के २० भेद

१ मिथ्यात्व—मिथ्यात्व को सेवे से आस्रव ।

साधारण नाम २८, अथिर नाम २९, अशुभ नाम ३०, दुर्भाग्य नाम ३१, दुःस्वर नाम ३२, आनादेय नाम ३३, अयश कीर्ति नाम ३४, गोत्र कर्म की १ (नीच गोत्र), अन्तराय कर्म की ५ (दानान्तराय १, लाभान्तराय २, भोगान्तराय ३, उपभोगान्तराय ४, वीर्यान्तराय ५) कुल ८२ ।

उपरोक्त ८२ प्रकार से पाप के अशुभ फल भोगे जाते हैं, इन पापों को जानकर पाप के कारणों को छोड़े तो इस भय में और पर भव में निरावाध परम सुख को पावे ।

१. आस्रव किसे कहते हैं ? जिसके द्वारा आत्मा

(१०)

- २ अजठ-पञ्चस्तथा महीं करे सो आसूय ।
- ३ प्रमाद-पाँच प्रमाद सेवे सो ॥ ।
- ४ कषाय-पचीस कषाय सेवे सो ॥ ।
- ५ अशुमयोग-अशुमयोग प्रवर्त्तये सो आसूय

मैं कर्म आये तथा जीवत्पीषा तात्प्राय कर्म स्वीक्य
 पानी पाँच आश्रयभूतरूप आश्रय (मिच्छात्वा अजठ
 प्रमाद कषाय अशुम योग) करी मरे ब्रह्मको
 अमरत्व कहते हैं । इसके सामान्य प्रकार से
 उपरोक्त ९ भेद कहे हैं और विशेष प्रकार से इसके
 ४२ और २७ भेद भी होते हैं । जैसे—२ इन्द्रिय के
 विषय ४ कषाय ३ अशुम योग, २२ क्रियाएँ, २
 अजठ ये ४२ भेद हुये । २७ भेद इस प्रकार—३
 मिच्छात्वा १२ अजठ २२ कषाय, १२ योग ।

१६ मण्ड वपगराज अजयखा से छेने और
अजयखा से रखे सो आसब ।

२० छर्र हुसम्म मात्र अजयखा से छेने और
अजयखा से रखे सो आसब ।

संवर, तत्त्व के २० भेद

१ समकित संवर । २ प्रव वचस्तासकर
सो संवर । ३ प्रमाद नहीं करे सो संवर । ४
कषाय नहीं करे सो संवर । ५ ह्यम योग प्रव

१ संवर किसको कहते हैं ? आसब को रोके
वसको संवर कहते हैं तथा जीवरूपीया पाषाण,
कर्मरूपीया पाषी आसवरूप नाभ्य, संवर हमी पाठ
करके आये हुए कर्मों को रोके वसको संवर तरव
कहते हैं । इसके सामान्य मन्तर से २० भेद करे हैं

तर्बे सो संवर । ६ प्राणातिपात-जीव^१ की
 हिसा नहीं करे सो संवर । ७ मृपावाद झूठ^२
 नहीं बोले सो संवर । ८ अदत्तादान-चोरी नहीं
 करे सो संवर । ९ मैथुन-कुशील^३ नहीं सेवे सो
 संवर । १० परिग्रह-प्रमत्ता नहीं राखे सो संवर
 ११ श्रुतेन्द्रिय वश करे सो संवर । १२ चक्षु-
 रिन्द्रिय वश करे सो संवर । १३ घ्राणेन्द्रिय वश
 करे सो संवर । १४ रसेन्द्रिय वश करे सो
 संवर । १५ स्पर्शेन्द्रिय वश करे सो संवर ।

और बिरोध प्रकार से ५७ भेद होते हैं—५ समिति,
 ३ राप्ति, २२ परीषद्, १० अतिधर्म, १२ भावना, ५
 चारित्र्य, ये ५७ हुये ।

१ जीवदया पाले । २. सत्य बोले । ३. ब्रह्मचर्य पाले ।

१६ मन बश करे सो संबर । १७ वपन बश
करे सो संबर । १८ कप्यावश करे सो संबर ।
१९ मण्ड उपगण्य जययासे लेवे मययासे
मुके (रखे) सो संबर । २० सुई कुसगा मात्र
जययासे लेवे और रखे सो संबर ।

निर्बरा के १२ भेद

१ अनशन, २ ऊयोदरी, ३ मिषाचयी,
४ रसपरित्याग, ५ कषयास्त्येय, ६ पण्डितसी-
याया, ७ प्रायश्चित्त ८ विनय, ९ वैशाख
(वैशाखस्य), १० स्वाध्याय, ११ ध्यान,
१२ विठसगा (व्युत्सर्ग) अर्पति काठसगा ।

१ निर्बरा तब किसी कहते हैं १ आत्मा से
कर्मकर्मा का बंध बेशत दूर होना तथा जीवकरो

कपड़ा, कर्मरूपी मैल, ज्ञानरूपी पानी, तप संयम रूपी साजी साधुन, उसमे धोय के मैल को निकाले उसको निर्जरातत्व कहते हैं ।

अनशन—चार प्रकार के या तीन प्रकार के आहार का त्याग करना । २ ऊणोदरी (अन्नमौदर्य)—भोजन की अविक रुचि होने पर भी कम भोजन करना । ३ भिक्षाचर्या—शुद्ध आहार आदि का लेना । ४ रम परित्याग—विगयादिक का त्याग करना । ५ कायक्लेश—वीर आसन आदि करना । ६ पण्डिसंलीणया (प्रति संलीनता) एकान्त शयनासन करना । ७ प्रायश्चित्त—जो आलोचना के योग्य हो उसकी आलोचना करके आत्मा को शुद्ध करना । ८ विनय—गुरु आदि का भक्ति भाव से अभ्युत्थानादि-द्वारा आदर सत्कार करना । ९—त्रेयावच (वैयावृत्य)

बन्ध, के ११ भेद

१ प्रकृतिबंध—आठ कर्म का स्वभाव । २ स्थितिबंध—आठ कर्म की स्थिति (कास) का मान प्रमाण । ३ अनुमागबंध—आठ कर्म का तीस मंदादि रस । ४ प्रदेशबंध—कर्म पुद्गलों के दस का आत्मा के साथ बैठना ।

आचार्यादि की दश प्रकार से सेवा करना । १० अशब्द (स्वाशब्द) शब्द की वाचना शुद्धता आदि करना । ११ अक्षर (ध्यान) मन को स्थिर करना । १२ चिह्नसंग (अनुस्मरण) काश के अक्षर का स्थापन करना ।

१ बन्ध किससे कहते हैं ? बीच कषाय बरा होकर कर्म पुद्गलों को मरवा करे तथा आत्म के

प्रदेश और कर्म के पुद्गल एक साथ मिले जैसे
 गीर नीर की तरह ब लोहे पिठ (गोला) अग्नि के
 माफिक लोलीभूत होकर बन्धे उसको बन्ध पड़ते हैं ।
 जैसे दृष्टान्त—जीप आठ कर्म से बंधा हुआ है,
 जीव और कर्म एकाग्र है, जैसे दूध और पानी एकाग्र
 है, हमराज पत्तो की चोंच खाटी है, दूध में पड़ते
 दूध घृथक कर दे, पानी न्यारा कर दे, उस माफिक
 जीव रूप हमराज ज्ञान रूपा चोंच द्वारा जीव जुदा
 कर दे कर्म जुदा कर दे । इन चार प्रकार के बन्ध
 का स्वरूप मोक्ष के दृष्टान्त से जानना । जैसे—१
 कोई मोक्ष बहुत प्रकार के द्रव्य के संयोग से उत्पन्न
 हुआ, वायु, पित्त, कफ को जिस स्वरूप फरके हथो,
 उसको स्वभाव कहिये । २. बोही लाडू पच, मास
 दो मास तक उसी स्वरूप में रहे उसको स्थितिवन्ध

सम्यग्ज्ञान, २ सम्यग्दर्शन, ३ सम्यग्चारित्र
और सम्यग् तप ।

पंद्रहवें बोले आत्माः आठ—१ द्रव्य
आत्मा, २ कषाय आत्मा, ३ योग आत्मा,
४ उपयोग आत्मा, ५ ज्ञान आत्मा, ६ दर्शन
आत्मा, ७ चारित्र आत्मा, ८ वीर्य आत्मा ।

सोलहवें बोले दण्डकः चौबीस—सात

के प्रदेशों से सब कर्मों का क्षय होना, बन्धन से
छूटना, उसको मोक्ष कहते हैं ।

१. आत्मा किसको कहते हैं ? जो ज्ञानादि
पर्यायों में निरन्तर गमन करे उसको आत्मा कहते हैं ।

२ दण्डक किसको कहते हैं ? जीवादि के स्वरूप
को समझाने वाली वाक्यपद्धति (वाक्यरचना)
को दण्डक कहते हैं ।

देवता का एक दण्डक । वैमानिक देवता का एक दण्डक । एवं २४ दण्डक ।

सत्रहवें बोले लेश्याः ६—१ कृष्ण लेश्या, २ नील लेश्या, ३ कापोत लेश्या, ४ तेजो लेश्या, ५ पद्म लेश्या, ६ शुक्ल लेश्या ।

१. लेश्या किसको कहते हैं ? जिसके द्वारा आत्मा कर्मों से लिप्त होता है तथा योग और कषाय की तरंग से उत्पन्न होती हो तथा मन के शुभाशुभ परिणाम को लेश्या कहते हैं अर्थात् परमार्थ से लेश्या कषाय स्वरूप ही है ।

छः लेश्या के लक्षण—आम्र वृक्ष को फला हुआ देखकर छः पुरुषों को उसके फल खाने की इच्छा हुई, इसमें जो पहला कृष्ण लेश्यावाला था उसको

(१०३)

अतिरौद्रः सदा क्रोधी, मत्सरी धर्मवर्जितः ।

निर्दयो वैरसयुक्तः कृष्णलेश्याधिको नरः ॥१॥

नीललेश्यावन्त के लक्षण—

अलसो मन्दबुद्धिश्च, स्त्रीलुब्धः परवचकः ।

कातरश्च सदा मानी, नीललेश्याधिको नरः ॥२॥

कापोत लेश्यावन्त के लक्षण—

शोकाकुलः सदा रुष्टः परनिन्दात्मशंसकः ।

सग्रामे प्रार्थते मृत्युं, कापोतक सदाहृतः ॥३॥

तेजो लेश्यावन्त के लक्षण—

विद्यावान् करुणायुक्तः, कार्याकार्यविचारकः ।

लाभालाभे सदा प्रीतिस्तेजोलेश्याधिको नरः ॥४॥

पद्मलेश्यावन्त के लक्षण—

क्षमाशीलः सदा त्यागी, गुरुदेवेषुभक्तिमान् ।

शुद्धचित्तः सदानन्धी, पद्मलेश्याधिको नरः ॥५॥

(१०४)

अठाहरवें बोले रहि। तीन—१ सम्यग्दृष्टि,
२ मिथ्यादृष्टि, ३ सम्यग्मिथ्यादृष्टि(मिथ्यादृष्टि)।

उसीसवें बोले ध्यान१ चार—१ आर्षध्यान
२ रौद्रध्यान, ३ धर्मध्यान, ४ शुक्लध्यान।

शुक्लध्यानान्त के अक्षर—

एकद्वेषनिमित्तु च, शोकनिष्ठाविबर्जितः।

परमात्मव्यसंभवा, शुक्लध्यानो यथेतरः ॥ ६ ॥

१ दृष्टि किस को कहते हैं ? अन्तःकरण की प्रवृत्ति को अर्थात् मन के अभिप्राय को दृष्टि कहते हैं।

२ ध्यान किसको कहते हैं ? एक वस्तु पर मन को स्थिर करना तथाको ध्याय कहते हैं। वह (ध्याय) वस्तुओं के अन्तर्मुखी मात्र रहता है। वह चार प्रकार का होता है—

बीसवें बोले पट् द्रव्य के ३० भेद, द्रव्य छः उनके नाम—१ धर्मास्तिकाय, २ अधर्मास्तिकाय, ३ आकाशास्तिकाय, ४ कालद्रव्य, ५ जीवास्तिकाय, ६ पुद्गलास्तिकाय ।

आर्त्तध्यान—अनिष्ट वस्तु का वियोग और दृष्ट वस्तु का संयोग चिन्तवना ।

रौद्रध्यान—हिंसादि दुष्ट आचरणों को चिन्तवना

धर्मध्यान—निर्जरा के लिए शुभ आचरणादि को चिन्तवना, तथा संसार की असंसारता चिन्तवना ।

शुक्लध्यान—संसार, पुद्गल, कर्म और जीवादि के स्वरूप स्वभाव का विशुद्ध रीति से चिन्तवना ।

१. द्रव्य किसको कहते हैं ? जिसमें गुण हैं व पर्याय उत्पन्न हों, ठहरे और नष्ट होती हैं उसको द्रव्य कहते हैं ।

अठारवें श्लोक दृष्टिः तीन—१ सम्पगृह्यति,
२ मिथ्यादृष्टि, ३ सम्पगृमिथ्यादृष्टि (मिथ्यादृष्टि) ।

उन्नीसवें श्लोक ज्ञान १ चार—१ आर्चभ्यान
२ शौद्रभ्यान, ३ धर्मभ्यान, ४ शुक्लभ्यान ।

शुक्लश्लोकान्त के अन्वय—

यगद्दोषविनिमुक्तं, शोकमिन्द्रविषमिह ।

परमात्मसाक्षात्पन्नं, शुक्लश्लोको मवेन्नरः ॥ ६ ॥

१ दृष्टि किस को कहते हैं ? अन्तःकरण की प्रवृत्ति को अर्थात् मन के अभिप्राय को दृष्टि कहते हैं ।

२ ज्ञान किसको कहते हैं ? एक वस्तु पर मन को स्थिर करना उसको ज्ञान कहते हैं । वह (ज्ञान) ज्ञात्यों के अन्तर्गुह्य भाव रहता है । वह चार प्रकार का होता है—

(22)

धीतर्षे चोले पट् इत्यत्र १ धर्मा
 द्यः उनके नाम—१ धर्मा
 स्तिकाय, ३ आकाशास्तिकाय,
 ५ जीवाम्तिकाय, ६ पुद्गलास्तिकाय
 आर्त्तध्यान—अर्त्त

वस्तु का संयोग चिन्तन ।
रौद्रध्यान—हिंसादि व्या

रौद्रध्यान—हिंसादि दुष्ट आचरणों को विचार
धर्मध्यान—निर्गुण के लिए शुभ आचरणों को
तवना, तथा संसार की श्रमभारों को विचारना ।
शुक्लध्यान—संसार, पुद्गल, कर्म, मोह, अज्ञान, इत्यादि

धर्मध्यान—निर्गुण के लिए शुद्ध आचरणों की विवशता, तथा संसार की अग्रगण्य विवशता।
शुक्लध्यान—संसार, पुद्गल, कर्म, इत्यादि।

शुक्लध्यान—ससार, पुद्गल, कर्म और जीवों के स्वरूप स्वभाव का विशुद्ध रीति में विनियमना ।
१. द्रव्य किसको कहते हैं ? त्रिषुर्वै रूपैः ।
पर्याय उत्पन्न हैं ।

१. द्रव्य किसको कहते हैं ? जिसमें स्थिति हो ।
पर्याय उत्पन्न हों, उदरे और नष्ट होना ।
द्रव्य कहते हैं ।

वर्मोन्निवारण का पाँच मोड़ों से जानना

१ गुह्य बन्धी—एक इन्ध, २ क्षेत्र बन्धी—साठ
 लोक प्रमाप्ते, ३ काल बन्धी—आदिचन्द्रार्द्धित, ४
 भाव बन्धी—बर्षा नहीं गन्ध नहीं रस नहीं, स्पर्श
 नहीं, अहंसी, अनीच, शारवत, सर्वभ्यापी और असं
 संकत प्रदयी है। ५ गुह्य बन्धी—ब्रह्मण, गुह्य, पानी
 में मच्छली का दृष्टान्त जैसे पानी के आधार (सहा
 यक)से मच्छली चले, इसी तरह जीव और पुद्गल
 दोनों वर्मोन्निवारण के आधार (सहायक) से चले।

अपर्मोन्निवारण का पाँच मोड़ों से जानना।

१ इन्ध बन्धी—एक इन्ध, २ क्षेत्र बन्धी—साठ
 लोक प्रमाप्ते ३ काल बन्धी—आदि चन्द्रार्द्धित
 ४ भाव बन्धी—बर्षा नहीं गन्ध नहीं, रस नहीं,
 स्पर्श नहीं, अहंसी, अनीच, शारवत, सर्वभ्यापी

(१८७)

और असख्यात प्रदेश हैं । ५ गुण थी—स्थिर गुण, थके पत्नी ने छाया का दृष्टान्त, जैसे थका पत्नी ने छाया को आधार (सहायता) उसी मार्फक ठहरे हुए जीव और पुद्गल के ठहरने में अधर्मास्तिकाय का आधार (सहायता) ।

आकाशास्तिकाय का पाच बोलों से जानना

१. द्रव्य थी—एक द्रव्य, २ क्षेत्र थी—लोकालोक प्रमाणे, ३ काल थी—आदि अन्तरहित, ४ भाव थी—वर्ण नहीं, गन्ध नहीं, रस नहीं, स्पर्श नहीं, अरूपी, अजीव, शाश्वत, सर्वव्यापी और अनन्त प्रदेशी हैं । ५ गुण थी—पोलाड़ गुण जगह देने का गुण । आकाश में विकास भीत में कीली का दृष्टांत, दूध में घटासा को दृष्टांत ।

काल द्रव्य को पाच बोलों से जाने ।

१ द्रव्य बन्धी—असम्पन्न द्रव्यों पर प्रयत्न २ क्षेत्र
 धर्मी अर्थात् द्वीप प्रमाण्ये, ३ काज बन्धी—आदि—
 असम्पन्न ४ भाव बन्धी बर्ण्य नहीं गन्ध नहीं रस
 नहीं स्पर्श नहीं अस्पर्श, शारवत और अमरेयी है ।
 ५ गुण बन्धी—वर्तन गुण नष्ट करने पुराना करे, पुनर्न
 को लपके कपड़े को केंचीय टाँठ ।

बीजवृत्तिकाय का पाँच बोझों से आनन्द,

१ द्रव्य बन्धी—असम्पन्न जोष द्रव्य, २ क्षेत्र बन्धी—
 स्वयं लोक प्रमाण्ये ३ काज बन्धी—आदिअसम्पन्न ४
 भाव बन्धी—बर्ण्य नहीं, गन्ध नहीं रस नहीं
 स्पर्श नहीं ।

अस्पर्श शारवत, सर्वव्यापी और असम्पन्न प्रयेयी
 है एक बीज आसरी असम्पन्न प्रयेयी है । ५ गुण
 बन्धी—वपयोग गुण, वस्तुमात्री कल्पय टाँठ ।

(१०६)

इकीसवें बोले राशि दो—जीवराशि^१,
अजीव राशि । जीवराशि^२ के ५६३ और

पुद्गलास्तिकाय को पाच बोलों से जानना

१ द्रव्य थी—अनन्ताद्रव्य, २ क्षेत्र थी—
सारा लोक प्रमाणे, ३ काल थी—आदिअन्तरहित,
४ भाव थी—रूपी, वर्ण है, गन्ध है, रस है, स्पर्श
है, अजीव शाश्वत और अनन्त प्रदेशी है । ५ गुण
थी—पूरण गलन, सङ्गन, विध्वंसन, गुण, वादल
का दृष्टात जैसे मिले और बिखरे ।

१. राशि किसको कहते हैं ? वस्तु के समूह को
राशि कहते हैं ।

२. संसारी जीव के ५६३ भेद इस प्रकार—
नारकी के १४ भेद । तिर्यक् के ४८ भेद । मनुष्य के

अग्नीवराणि के ५६० मेर होते हैं ।

३०३ मेर । बेवता के १६८ मेर । यह पांच ही प्रसिद्ध मेर हुये ।

३. अग्नीवराणि के ५६ मेर, जिसमें अग्नीव अरुणी के ३० और अग्नीव रूपी के २६ । यह कुल ५६० मेर ।

अग्नीव अरुणी के १० मेर इस प्रकार—धर्मास्तिकाय के तीन मेर—लंब (सम्पूर्ण वस्तु) देश (दो-तीन अक्षि भाग), प्रदेश (जिसका दूसरा भाग खी हो सके) ये तीन । अधर्मास्तिकाय के तीन मेर—लंब, देश, प्रदेश । आकारास्तिकाय के ३ मेर—लंब देश, प्रदेश, काष्ठ इत्येक एक मेर = १० । धर्मास्तिकाय के ३ मेर—१ इत्येक २ क्षेत्र,

(१११)

३ काल, ४ भाव, ५ गुण । अधर्मास्तिकाय के पांच भेद—१ द्रव्य, २ क्षेत्र, ३ काल, ४ भाव, ५ गुण ।
 आकाशास्तिकाय - के ५ भेद—१ द्रव्य, २ क्षेत्र, ३ काल, ४ भाव, ५ गुण । काल द्रव्य के पांच भेद—
 १ द्रव्य, २ क्षेत्र, ३ काल, ४ भाव, ५ गुण । कुल २० भेद ।

अजीव रूपी के ५३० भेद इस प्रकार—

१०० सठाण ५—परिमहल, बट्ट, तंम, चवरंस, आयत । एक एक के भेद $२० \times ५ = १००$

१०० वर्ण ५—काला, नीला, राक, पीला, घोला । एक एक के भेद $२० \times ५ = १००$

१०० रस ५—तीखो, कड़वा, कपायला, खटा, मीठा । एक एक के भेद $२० \times ५ = १००$

४६ गन्ध २—सुगन्ध, दुर्गन्ध । एक एक के

वर्षसबे बोले भाषकजी के पारह बूत।

१ पहले बूत में भाषकजी अस्तजीव हथने का त्याग करे (हस्तता पसता जीव बिना अपराधे मारे नहीं) और स्थावर की मर्यादा करे ।

२ दूसरे बूत में भाषकजी मोटक मूठ नहीं बोले ।

मेर २३ × ५ = ४५ ।

१८४ स्वर्ग ८—करदण, सु हावा, मारी, हलक शीत बच्च चीकवा गुला । एक एक के मेर २३ × ८ = १८४ । कुल २३० मेर ।

१ प्रत्येक किसको कहते हैं ? मर्यादा में बसना बसको कहते हैं ।

(११३)

३ तीसरे व्रत में श्रावकजी मोटकी चोरी नहीं करते ।

४ चौथे व्रत में श्रावकजी परस्त्रीसेवन का त्याग करे और अपनी स्त्री की मर्यादा करे ।

५ पांचवें व्रत में श्रावकजी परिग्रह की मर्यादा करे ।

६ छठे व्रत में श्रावकजी छः (पूर्व, पश्चिम, उत्तर, दक्षिण, ऊँची, नीची) दिशा की मर्यादा करे ।

७ सातवें व्रत में श्रावकजी छब्बीस बोल की मर्यादा करे और पन्द्रह कर्मादान का त्याग करे ।

८ आठवें व्रत में श्रावकजी अनर्थ दण्ड का

त्याग करे ।

६ नौवें वृत्त में भावकजी प्रतिदिन श्रद्धा सामायिक करे (सामायिक का नियम रखे) ।

१० दशवें वृत्त में भावकजी देसावगाधिक पोषी करे, संभर करे, चौदह नियम चितारे ।

११ ग्यारहवें वृत्त में भावकजी प्रतिपूर्व पोष्य करे ।

१२ बारहवें वृत्त में भावकजी प्रतिदिन चौदह प्रकारे धान दान देवे ।

छेत्सवें वीस साधुजी के पांच महाभूत^१

१ महाभूत किसे कहते हैं ? सर्व विद्यति अर्थात् सम्पूर्ण रीति से हिंस्र, असत्य बोरी कुत्सीक और परिश्रम का त्याग करना ।

१ पहिले महावृत में साधुजी महाराज सर्वथा प्रकारे जीव की हिंसा करे नहीं, करावे नहीं, करताने भला जाणें नहीं, मन, वचन, काया करी, तीन करण तीन जोग से ।

२ दूसरे महावृत में साधुजी महाराज सर्वथा प्रकारे झूठ बोले नहीं, बोलावे नहीं, बोलताने भला जाणें नहीं, मन, वचन, काया करी, तीन करण तीन जोग से ।

३ तीसरे महावृत में साधुजी महाराज सर्वथा प्रकारे चोरी करे नहीं, करावे नहीं, करताने भला जाणें नहीं, मन, वचन, काया करी, तीन करण तीन जोग से ।

४ चौथे महावृत में साधुजी महाराज सर्वथा

अरे मैपुन सेवे नहीं, सेवाने नहीं, सेवताने मस्ता आखे नहीं, मन, बचन, काया करी, तीन करण तीन योग से ।

५ पाँचवें महाप्रथ में साधु जी महाराज सर्वथा प्रकारे परिग्रह राखे नहीं, रखावे नहीं, राखताने मस्ता आखे नहीं, मन, बचन, काया करी, तीन करण तीन योग से ।

चौबीसवें दोसरे भाँभा १४६ को याद पया —

११ अंक एक ग्यारह को—भाँया उपजे नव, एक करख एक योग से करखा—१ करूँ नहीं मनसा, २ करूँ नहीं बयसा, ३ करूँ नहीं

१ भंग किसको करते हैं १ विमर्ग रूप रचन को भंग करते हैं ।

(११७)

कायसा, ४ कराऊँ नहीं मनसा, ५ कराऊँ नहीं
वयसा, ६ कराऊँ नहीं कायसा, ७ अणुमोदूँ
नहीं मनसा, ८ अणुमोदूँ नहीं वयसा, - ९
अणुमोदूँ नहीं कायसा ।

१२ अंक एक बारह को—भांगा उपजे
नव, एक करण दो जोग से कहणा, १ करूँ
नहीं मनसा, वयसा, २ करूँ नहीं मनसा,
कायसा, ३ करूँ नहीं वयसा, कायसा, ४ कराऊँ
नहीं मनसा, वयसा, ५ कराऊँ नहीं मनसा,
कायसा, ६ कराऊँ नहीं वयसा, कायसा, ७
अणुमोदूँ नहीं मनसा, वयसा, ८ अणुमोदूँ
नहीं मनसा, कायसा, ९ अणुमोदूँ नहीं वयसा,
कायसा ।

(११८)

११ अंक एक तेरह को—भाया उपमे तीन,
एक करण तीन योग से कहाया, १ करूँ नहीं
मनसा बयसा, कायसा, २ कराऊँ नहीं मनसा,
बयसा, कायसा, ३ अणुमोहूँ नहीं मनसा,
बयसा, कायसा ।

२१ अंक एक २१ को—भाया उपमे नव
दो करण एक योग से कहाया—१ करूँ
नहीं, कराऊँ नहीं मनसा, २ करूँ नहीं कराऊँ
नहीं बयसा, ३ करूँ नहीं कराऊँ नहीं कायसा,
४ करूँ नहीं, अणुमोहूँ नहीं मनसा, ५ करूँ
नहीं, अणुमोहूँ नहीं बयसा, ६ करूँ नहीं, अणु-
मोहूँ नहीं कायसा, ७ कराऊँ नहीं अणुमोहूँ
नहीं मनसा ८ कराऊँ नहीं, अणुमोहूँ नहीं

(११६)

वयसा, ६ कराऊँ नहीं अणुमोदूँ नहीं कायसा ।

२२ अंक एक चाईस को—भांगा उपजे नव,
 दो करण दो जोग से कहना—१ करूँ नहीं
 कराऊँ नहीं मनसा वयसा, २ करूँ नहीं
 कराऊँ नहीं मनसा कायसा, ३ करूँ नहीं
 कराऊँ नहीं वयसा कायसा, ४ करूँ नहीं
 अणुमोदूँ नहीं मनसा वयसा, ५ करूँ नहीं
 अणुमोदूँ नहीं मनसा कायसा, ६ करूँ नहीं
 अणुमोदूँ नहीं वयसा कायसा, ७ कराऊँ नहीं
 अणुमोदूँ नहीं मनसा वयसा, ८ कराऊँ नहीं
 अणुमोदूँ नहीं मनसा कायसा, ९ कराऊँ नहीं
 अणुमोदूँ नहीं वयसा कायसा ।

२३ अंक एक तेईस को—भागा उपजे

(१२०)

, दो करण तीन बोग से करवा—१
करूँ नहीं कराऊँ नहीं मनसा बयसा कायसा,
२ करूँ नहीं अयुमोहूँ नहीं मनसा बयसा
कायसा, ३ कराऊँ नहीं अयुमोहूँ नहीं मनसा
बयसा कायसा ।

३१ अंक एक एकतीस को—मांगा उपमे
तीन, तीन करण एक बोग से करवा—१
करूँ नहीं कराऊँ नहीं अयुमोहूँ नहीं
मनसा, २ करूँ नहीं कराऊँ नहीं अयुमोहूँ
नहीं बयसा, ३ करूँ नहीं कराऊँ नहीं
अयुमोहूँ नहीं कायसा ।

३२ अंक एक बत्तीस को—मांगा उपमे
तीन, तीन करण दो बोग से करवा—१

(१२१)

करुं नहीं कराऊं नहीं अणुमोदूं नहीं
मनसा वयसा, २ करुं नहीं कराऊं नहीं अणु-
मोदूं नहीं मनसा कायसा, ३ करुं नहीं कराऊं-
नहीं अणुमोदूं नहीं वयसा कायसा ।

३३ अंक एक तेत्तीस को—भांगा उपजे
एक, तीन करण, तीन जोग से कहणा—१
करुं नहीं कराऊं नहीं अणुमोदूं नहीं मनसा
वयसा कायसा ।

आक	११	१२	१३	२१	२२	२३	३१	३२	३३
भागा	६	६	३	६	६	५	३	३	१
करण	१	१	१	२	२	२	३	३	३
जोग	१	२	३	१	२	३	१	२	३
सर्व भागा	६	१८	२१	३०	३६	४२	४५	४८	४६

(१२२)

बीसरे बोले चारित्र^१ पांच—१ सामायिक
चारित्र, २ धेदोपस्थानिक चारित्र, ३ परिहार
विद्युद् चारित्र, ४ सूक्ष्मसंपराय चारित्र, ५
यथाक्यस्त चारित्र ।

॥ इति ॥

अन्तिम मांगलिक श्लोक—

मङ्गलं मयवान् बीरो मङ्गलं गौतमा प्रमुः ।
मङ्गलं स्वस्तिमद्रादिः जैनधर्मस्तु मङ्गलम् ॥१॥

१ चारित्र किछको कहते हैं ? चारित्र मोहमीच
क कच वा पयोचराम से कलज होते हुए बिरकि-
परिक्कम को तथा संभव अतुलान को तथा जो न
कर्मों को करे (भारा करे) उसको चारित्र कहते हैं ।

अध्यात्म-गुण-माला

मनुष्य कौन ?

(१) अग्नि का स्वभाव गरम और बरफ का स्वभाव शीतल स्वाभाविक है किन्तु अग्नि में गरमी न हो और बरफ में शीतलता न हो तो वह अग्नि और वह बरफ नहीं, इसी तरह जिसमें यह चार गुण नहीं वह मनुष्य नहीं ।

(१) स्वाभाविक भद्रिकता (२) स्वाभाविक विनय (३) दयालुता (४) अमात्सर्य (अद्वेष) गुणा-
नुराग ।

(२) भद्रिक-वक्रता कपट करता नहीं ।

(३) विभीषण-सहाय्य करता नहीं ।

(४) दयालु-हिंसा (किसी को कुछ देता) करता नहीं ।

(५) गुणानुगामी-श्रेय करता नहीं ।

(६) जैसे बरफ में शीतकता है और अग्नि में उष्णता है वैसे मनुष्य के ऊपर के चार गुण होते हैं ।

(७) चार गुण से विरहीत दशम वह मनुष्यत्व रहित है ।

(८) चार गुणों से विपरीतवा वह भाव में बराबरी और तिर्पणत्व कहलक है क्योंकि मित्रम से वह शीघ्र मरक वा तिर्पण में आयेगा ।

(९) उपरोक्त गुण रहित इन्द्रिय से—आहर्षित में मनुष्य है किन्तु भाव में बराबरी और बहुमप बोधन बिना रहा है ।

(१२५)

(१०) चार गुणसे विपरीत दशा तीन काल में मनुष्यता में नहीं हो सकती । उपरोक्त पूर्णतया जिसमें गुण हों वही मनुष्य है ।

(११) बड़ा जहाज बनाने पर भी, एक छेद रह जाय तो वह तिर नहीं सकता, इसी प्रकार मनुष्यता के पूर्ण गुण बिना मनुष्य नहीं बनता ।

दस बोल

(१) मानव भव-मिलना बहुत कठिन है, अनन्त तिर्यञ्च के भव, असंख्य नारकी के भव, असंख्य देव के भव करने पर एक मनुष्य देह प्राप्त हुआ है इसीलिए प्रभु फरमाते हैं कि अनन्त भव भ्रमण रूप ससार समुद्र उलघन करके मनुष्य भव रूप किनारे आकर गाफज मत रह । हे गौतम ! तुम्हारी जहाज किनारे पर आगई है, बाहर निकलो, समय

(१२१)

गात्र का प्रसार मत करो । प्रकृति में (१) यद्विच्छा (२) विनय (३) वयसुखा नीर (४) अमास्यर्ष (अर्धमास रहित) से ४ गुण होने से मनुष्य भव मित्र सकता है ।

(२) अर्ष सेत्र—अर्ष—आत्म पाप, रहस्य छान बन्ध, पात्र मध्यम रीति रिवाज कर्म कर्म अर्षि की तीव्र अनुमोदना से अर्ष पर (उत्तम आचार विचार) मित्र सकता है ।

(३) वयसुखा—आठ मर रहित—गुणगुण-गता सुशिक्षा नीर सदाचार की आराधना से मित्र सकता है ।

(४) पूर्ण इन्द्रिय—पूर्ण इन्द्रिय पर ३ अंगुलि से अर्धम रश्मि से प्राप्त हो सकती है ।

(५) तीरोगता—अर्धम माय, मृत, नीर सत्त्व,

(१२७)

को मन वचन और काया से सर्वथा प्रकारे साता पहुँचाने से प्राप्त होता है ।

(६) दीर्घायु—अनंत जीवों को नौ कोटि से अभय दान देने से प्राप्त होता है ।

(७) सद्गुरु—गुरु पधारने की बधाई में राक्ष्य मुकुट सिवाय दूसरी महान् संपत्ति दे देने से तथा अनन्त जीवों को गुरु समागम कराने की दत्ताली करने से प्राप्त होते हैं ।

(८) शास्त्र श्रवण—अनंत जीवों को शास्त्र सुनाने से ज्ञान दान के साधनों में उत्कृष्ट दान देने से तन मन धन से ६ कोटि-सम्यक् ज्ञान की आराधना करने पर शास्त्र श्रवण की योगवाँई मिल सकती है ।

(९) भ्रद्धा—आत्मा का अनुभव ज्ञान बढ़ाने से प्राप्त होती है । अभ्रद्धा का कारण—धार्मिक आदि

(१२८)

जिन्दगी की जिन्दगी बचिवा दासी के बाद
 वैसी अनुभवामन्द रहित दशा होने से इन्द्र की
 मन्त्रा नहीं हुई । आज वैसी दशा है ? वह विचार ।

(१) पुरुषार्थ—अनेक वृत्तय कार्य बहुत कर
 सहकर करने से यह वृत्त भीर्न पुरुषार्थ मिला है ।
 किन्तु आज प्रमाद स्त्री विष से बसक नग हो
 रहा है ।

(११) उत्तम सामग्री का सदुपयोग न करे वह
 मिला हुआ चिन्तामणि रत्न कैंकरे बणार है अम
 योग का कदम में बिखी हुई राखि बगना सो चिन्ता
 मणि काकर मरने बणार है ।

आत्मविचार

(१) चिन्तामणि रत्न के जहाज में कैंकर मल मरे ।

(१२६)

(२) यावना चन्दन के जहाज में बिष्टा जमा मत करो ।

(३) मरना क्या है ? मरने पर शरीर को क्यों जलाते हैं ?

(४) शरीर तो वही है फिर जलाना क्यों ?

(५) शरीर में से कौनसा तत्व चला गया ?

(६) उस तत्वको ढूँढ़ो, उसका विचार करो ।

(७) आत्मतत्व कहाँ है ? क्यों चला जाता है ?

(८) उस तत्व के लिये आपने क्या किया ?

(९) शरीर के लिये आजतक क्या किया ? और क्या कर रहे हो ?

(१०) आत्म तत्व के लिये आजतक क्या किया ? और क्या कर रहे हो ?

(११) आत्मा कीमती है या शरीर ?

(११०)

(१२) दोनों में से किसकी सेवा करनी चाहिये ?
किसकी कर रहे हो ? और किसकी ?

(१३) मरने पर कहाँ पधारोगे ?

(१४) साब में क्या खाये थे ? और क्या ले
जाओगे ?

(१५) पूछी और कबे कहाँ तक है ?

(१६) मरने बाद साहूकार और कर्मदार का स्वा
होय है ? (फिर भी कौनिक कर्म की फिक्र है लेकिन
पापकर्म इसी कर्म की फिक्र बसते-सौभाग्य नहिस्सा भी
नहीं है)

(१७) आज ही मृत्यु आजाये तो क्या रोह
सकते हो ?

(१८) आज ही मृत्यु आजाये तो कुटुम्ब और
व्यवहार कैसे चलेगा ?

(१३१)

(१६) प्रसन्न इन्द्र या कोपायमान राक्षस भी साता असाता नहीं दे सकते । जीव को कर्मानुसार सुख दुःख भोगने पड़ते हैं ।

(२०) आयुष्य अल्प है और आशा अनन्त है ।

(२१) ससारी कार्य पूर्ण होने के लिये अनन्त वर्ष चाहियें ।

(२२) संसार में रहते अनन्त वर्ष बीत गये किन्तु कार्य अपूर्ण हैं ।

(२३) मिनटों के आयु में अनन्त आशा के कार्य पूर्ण नहीं हो सकते ।

(२४) भेद ज्ञान के विचार से सब कार्य पूर्ण हो सकते हैं ।

(२५) शरीर, परिवार, भोग सामग्री, वैभव, यशोकीर्ति आदि सकल पचेन्द्रियों से प्राप्त पदार्थ

अस्या से भिन्न है, जुड़े हैं इसका संबोध विभोग
मुझे कोई सुख पुण्य नहीं दे सकता ।

(२६) इन्द्रिय सुख में पांच दोष हैं । १ स्वार्थीकता
२ बहुव क्ल से मिश्रण ३ अस्थिति (कभी वृत्ति नहीं
होती) ४ विमिशरीक, ५ अमन्य सुख ।

(२७) विषय सुख जोकये में पांच महान् गुण
हैं । १ स्वार्थीकता २ सुख की स्थिति, ३ वृत्तिक्षय
४ अविमिशरीक ५ अमन्य सुख ।

५ वेदनीयः और मोहनीय कर्म ।

(१) वेदनीय कर्म से मोहनीय कर्म अमन्य गुणा
विशेष कहवान् है ।

१—वेदनी से कहीं अज्ञान वेदनी की जगह है ।

मोहनीय से विषय मिश्र मोहनी की जगह है ।

(१३३)

(२) सब कर्मों का राजा मोहनीय कर्म है ।

(३) मोहनीय कर्म राजा है और कर्म उस की प्रजा हैं ।

(४) राजा प्रजा से भिन्न रहता है ।

(५) मोहनीय कर्म भी दूर रहता है ।

(६) तब बाल जीव उसके वियोग से रुदन कर रहे हैं ।

(७) मोहनीय कर्म महा राक्षस है उस को बाल जीवों ने अन्नदाता, शरणदाता और सुखदाता मान रखा है ।

(८) मोहनीय कर्म जितना दूर रहता है उतना ही बाल जीव पतंग बनकर उसकी ज्वाला में गिरता है ।

(९) मोहनीय कर्म दीपक सरीखा सुन्दर दिखता है और स्पर्श करनेवाले के हाथों को जलाता है ।

(१३४)

(१०) मनुष्य ने मोहनीय कर्म को सुख की मान मान रखा है ।

(११) और बेहनीय कर्म को दुःख की मान मान रक्खा है ।

(१२) बेहनीय कर्म के मम से बाह्यनीय भूयते हैं (भ्रंयते हैं) और मोहनीय कर्म को प्रेम से भेदते हैं ।

(१३) बेहनीय कर्म मनुष्य के पास आया है वह मनुष्य उससे दूर भागता है ।

(१४) मोहनीय कर्म मनुष्य से दूर रहता है वह मनुष्य उससे समीप आता है ।

(१५) बेहनीय कर्म का विष निष्कू के चहर के बराबर है ।

(१६) सूर्य के चहर समान मोहनीय कर्म है ।

(१७) विच्छू के जहर वाला चिल्लाता है और सर्प के जहर वाला नींद की लहरें लेता है, जगाने से नहीं जागता है वैसे मोह के नशे वाले को समझाने से भी नहीं समझता ।

(१८) सर्प के विषवाला नीम के पत्तों को मीठे समझ कर खा जाता है, वास्तव में उसे वे पत्ते कढ़वे के स्थान पर मीठे मालूम होते हैं, विष को भी शक्कर मान खा जाता है ।

(१९) मोहनीय कर्म के नशे वाला भी वास्तव में दुःखदायी विषय भोग के संयोगों को सुख का स्वप्न मानकर अपनाता है । गन्दे मल मूत्र के स्थान में सुख का सागर मानता है झूठा यादृश सुख सदा मान मोहित बनता है ।

(२०) वेदनीय कर्म वाला विच्छू के जहर

समान जागह है और उसके द्विजे वनाप हुई प्य है ।

(२१) जब मोहनीय कर्म बाध्य वेदोपा हो बाध्य है वनाप करने की तो कना वनाप करे उसे स्वीकार करने की इच्छा मानी होती ।

(२२) वेदनीय कर्म के प्रय से वचने के द्विजे बह पूर्व हैवारी करता है और उसके संयोग से हुन्महमव करता है जब मोहनीय कर्म का मव करने के स्थान पर उसके अस्तु समझकर वैसे संयोग बढ़ाने की कोशिश करता है ।

(२३) वेदनीय कर्म मिथ्याने जाधे का उपकार मायता है और उसके कुरामर करता है, उसके मेव स्वरूप बड़ीस देता है ।

(२४) जब मोहनीय कर्म के स्वरूप को समझने

(१३७)

वाले तथा उसके भय के उपाय घटाने वाले सद्गुरु से विमुख रहता है ।

(२५) मोहनीय कर्म कैसे बढ़े इसका इलाज मोहनीय कर्म के मिटाने वाले सद्गुरु वैद्य से पूछता है और वैद्यराज के नुस्खा न घटाने से वैद्यराज से नाराज होकर उनका विरोधी बनता है ।

(२६) स्त्री (पति) पुत्र धनादि ये मोहनीय कर्म बढ़ाने के साधन हैं, ये आत्मा से दूर रहते हैं तब पामर वियोग दुःख से तथा मिलने पर उनके संयोग में मोहाव होकर मानव जन्म की राशि को नष्ट भ्रष्ट कर देता है ।

(२७) चोरी हो जाना, घर में आग लगना, व्यापार में नुकसान होना, पति-स्त्री पुत्रादि का वियोग होना यह सब मोहनीय कर्म की मात्रा घटने के

साधन हैं, उपरि बाह्य जीव जन के घटने से दुःखा सुभव करता है और संयोग में स्वर्गीय सुख प्राप्त होता है ।

(२८) मोहनीय कर्म के घटने से रोषा है और बेदनीय कर्म के घटने से ईर्ष्या है ।

(२९) मोहनीय कर्म का बरव बढ़ने से अमरुत सीध नरक में गये ।

(३०) बेदनीय कर्म के बरव के बढ़ने से वैराग्य पाकर अमरुत सीध मोक्ष में पधारे ।

(३१) मोहनीय कर्म के बढ़ने से ईर्ष्या है और बेदनीय कर्म बढ़ने से रोषा है ।

(३२) मोहनीय कर्म मोक्ष मार्ग के त्रिषु त्रितय बाधक है वतना ही बेदनीय कर्म मोक्ष मार्ग के त्रिषु बाधक है ।

(१३६)

(३३) श्री नमीराज ऋषीश्वर, श्री अनाथी मुनि महाराज, श्री सनन्तकुमार चक्रवर्ती, श्री शालीभद्रजी और श्री धन्नाजी, श्री लक्ष्मी पति शेठ, श्री कीर्तिध्वज राजा, श्री भरत महाराज और अनन्त जीव वेदनीय के उदय से चेत गये और मोक्ष मार्ग में प्रवृत्त हुए ।

(३४) वेदनीय कर्म उपरोक्त महापुरुष जैसे अनन्त महा पुरुषों को मोक्ष मार्ग में साधक बना ।

(३५) वेदनीय कर्म आत्म जागृति कराने वाला है ।

(३६) मोहनीय कर्म आत्म-भाव भुजाने वाला

(३७) वेदनीय कर्म आत्मा और शरीर को भिन्न समझाता है ।

है ।

(३८) मोहनीय कर्म आत्मा और शरीर का एक-

अनुभव करता है ।

(३६) वेदमीय कर्म की पुष्ट बख्शी को असाध्य समझता है तब मोहमीय कर्म शरणमूर्त बनता है ।

(४) दोहा-सुख पाये शीघ्र पड़े,
कर्म रुचि नष्ट होय ।

बलिहारी उस दुःख की,
पल पल बीर मर्याद ॥१॥

(४१) मोहमीय कर्म स्वर्ग, शरक, पुष्ट और पाप के विचार को मुक्तता है तब वेदमीय प्रति समझ पाद करता है ।

(४२) वेदमीय कर्म मृतकाष्ठ के अमृत बंधे हुए कर्मों को तोड़ने का और मोहमीय नवीन अमृत कर्म जोड़ने का साधन है ।

(४३) वेदमीय कर्म आत्मा को शरक बनाता है

(१४१)

जब मोहनीय कर्म आत्मा को घट बनाता है ।

(४४) वेदनीय के उदय से अनन्त जीव चेतकर मोक्ष में पधारे तब मोहनीय के उदय में अनन्त जीवों ने मानव भव जो मोक्ष का द्वार था उसको नरक द्वार बनाया ।

(४५) ऐसा होते हुए भी बाल जीव वेदनीय कर्म का तिरस्कार करता है और मोहनीय कर्म को प्रेम से भेटता है ।

(४६) वेदनीय कर्म आत्म जागृति के लिये प्रकाश है तब मोहनीय कर्म आत्म जागृति के लिए अन्धकार है ।

(४७) वेदनीय कर्म स्व और परका ज्ञान देने वाला है तब मोहनीय स्व और परका भान भुलाने वाला है ।

(४८) बेहमीश को दूर करने के लिये हजारों काजों रुपये खर्च किये और स्वासोरम्भनास है वहाँ तक खर्च करोगे किन्तु मोहनीय का रोग बढ़ाने के लिये लाखों करोड़ों खर्च किये,। अरे ! मोह के दरवाजे को नरकद्वार बना रहे हो । अब तो बेवो और मोह फटाओ ।

(४९) प्रभु महावीर मोहनीय कर्म फटाने को पहरमा रहे हैं तब उनके मछ पुत्र मोहनीय कर्म बढ़ा रहे हैं ? का बढा रहे हैं ?

(५०) मोहनीय कर्म को प्रभु बचन से विच्छेद बन कर बढ़ावे वह प्रभु के सुपुत्र हैं कि कुपुत्र ? शासन को दिवावे कि कर्षक लगावे ? शासन में चन्द्र कि शासन में राहू ? प्रभु शासन के ईश कि अग ।

(५१) जिसको प्रभु के बचन पर विश्वास होगा

(१४३)

वह जितना उपाय वेदनीय कर्म घटाने को करता है उतना ही मोहनीय कर्म के संयोगों को घटाने के लिये करेगा ।

आस्तिक के लिये इशारा काफी है और नास्तिक के लिए पूर्वों का ज्ञान भी निरर्थक है ।

समकित दर्पण

१. आत्मा और शरीर का ज्ञान होना वह समकित ।
२. समकित होते ही आत्मा की चिन्ता रहती है ।
३. जैसे मिथ्यात्वी शरीर के लिए रात्रि दिन चिन्ता करता है उससे समदृष्टि आत्मा की चिन्ता अनन्त गुणी करता है क्योंकि मिथ्यात्वी को तो एक भव का ज्ञान है, तब समकित की को अनन्त भव का ज्ञान है, जितना ज्ञान उतनी चिन्ता जितना ज्ञान उतना पुरुषार्थ यह स्वाभाविक है ।

४ ज्ञान ज्ञानी चिन्ता अज्ञान ज्ञानी निरिचरता ।

५ समझी को आस्था की चिन्ता ।

६ मिथ्यात्वी को शरीर की चिन्ता ।

७ मिथ्यात्वी से समझी को अमरत सुखी चिन्ता होती है ।

८ समझि आने के बाद तबज में भी की पुत्र और धन की तरह मन नहीं जाता ।

९ सूर्य जलम होने के बाद सब जगह प्रभरा है हँदने पर भी अन्धकार नहीं बिकता ।

१० समझि आने के बाद ज्ञानस्मयकरसूर्य वरता है जिसके स्वयमे भी-पुत्र और धन का मोहस्प अन्धकार बहकर भस्म होता है ।

११ सूर्य वहाँ अन्धकार नहीं, अन्धकार वहाँ सूर्य नहीं ।

(१४५)

१२. समकित वहाँ मोह नहीं मोह वहाँ समकित नहीं ।

१३. सूर्य का उदय होने से अन्धेरा होवे वह सूर्य नहीं ।

१४. समकित होते हुए स्त्री पुत्र और धन का मोह होवे वह समकित नहीं वह वो अनादि का मिथ्यात्व रूप राहु है ।

१५. समकित जीव दुनियाँ से अलग रहता है ।

१६. मिथ्यात्वी के और समकित के बीच में आकाश जमीन जितना अन्तर है ।

१७ मिथ्यात्वी जमीन पर पैदल घीसकर चलने वाला पामर कीड़ा है (भोग रूप कीचड़ का भस्मी)

१८ तब समदृष्टि जीव आकाश में स्वतन्त्र रूप से विचरने वाला मुक्ताफलाहारी राजहंस है ।

११. समकित होने के बाद स्वप्न में भी संसार के भोग की तरह रुचि मही होती, समकितों को रुचि में भी भोग का स्वप्न मही आता, कभी पारोक्ष्य से भोग का स्वप्न में क्वाथमात्र का स्वप्न आने से कैसे विध्वारही स्वप्न को देखकर चमकता है जैसे समकित अनंत धैर्यवत् से वसन्त परिहार करता है ।

२०. समकित होने के बाद वसन्त रुचि में, भाषा में, मन में और कथ्य में से निष्पत्ति रही सुखा वृद्ध समस्त कर भग जाता है ।

११. जैसे हरियसिंह को देख के बूझते हैं जैसे समकित का प्रवेश होने के बाद मोक्ष रूप हरिय भागने का रास्ता बूझ रहे हैं ।

२२. समकित शीरे मोती को बगले बंदर से

(-१४७)

विशेष नहीं मानता ।

२३. समदृष्टि स्त्री और पुत्र को पाड़ौसी मानता है ।

२४. शरीर को हाड़ मांस लोही का जेलखाना मानता है और उससे छुटने के लिये उत्कृष्ट पुरुषार्थ करता है ।

२५. देवागना और सड़ी कुत्ती को बराबर मानता है (एक उज्जल कोठड़ी और दूसरी गंदी कोठड़ी का कैदी जीव है)

२६. देवागना के हाव भाव सड़ी कुत्ती के पूंछ को हिलाने बराबर समझता है ।

२७. देवागना के गायन को और कुत्ती के भोंकने को बराबर समझता है ।

२८. समकृति को असंख्य देवता के मानिक

(185)

इन्द्र का बल के साथ चक्रवर्ती, तीन-जोड़ के साथ बाहुदेव को चक्रवर्ती हुन्नी देना था है उनके हुन्नी देनाकर समष्टि के धर्म में से कल्याणस के कल्याण मिल रहे हैं।

२६. समादिति समुद्र से अथवा विरोध नष्ट होना है ।

३० कभी अपनी सम्पत्ति को सम्पत्ति नहीं मानना है।

३१ स्त्री और नरक दोनों स्वाम को बचकर
पान्था है ।

३२. गारुडी के जीव और देवता को समान मानता है ।

३३. वेग गति को समीन की प्रति से क्या
करी सकता ।

(१५१)

४३. समदृष्टि नरक को स्वर्ग बनाता है ।

४४. विषमदृष्टि मोक्ष भूमि को नरक भूमि बनाता है ।

४५. समदृष्टि समवाचा, सम मन, सम काया ।

यही मानव जीवन का मूल्य है । यही सुख का ज्ञान है ज्ञान व चारित्र्य का सार है ।

चार सुख शय्या (श्रीठाणगजी के चौथे ठाणे)

सम्यक् समझ (समकित) २ प्राप्त संयोग में
वि ।

(भोगों की अकृति) ४ दुःख, कष्ट,

ते समता, धैर्य ।

से अतिशय ज्ञान होवे ।

१. विषय-ममता रहित पश्य प्रमाण
नी करे ।

(१२०)

रैक की सवारी में मेथिक के पोर्से बोले दबकर
: गया वह बेचझोक में जाकर प्रमु दरीनार्थ मेथिक
की सवारी से बाली पहुँच गया ।

१८. समस्त जाने क बार पापी परदेरी मिट
कर परम पवित्र पुरकारका परदेरी महा भावक
करदाय ।

१९. जो ५ • जोर साव बोरी करते थे उन्होंने
बोरी का घन्टा लही कुछ जोर के भी बम्बुडमार
का शरण लिया ।

४०. तीर्थंकर को भी समस्त का शरण दे ।

४१. समस्त शस्त्र की शॉल से भी ब्यादा रदा
करे वह समस्त ।

४२. प्राण जाने की विन्ता लही किन्तु समस्त
विषम न हाथ ।

(१५१)

४३. समदृष्टि नरक को स्वर्ग बनाता है ।

४४. विषमदृष्टि मोक्ष भूमि को नरक भूमि बनाता है ।

४५. समदृष्टि समवाचा, सम मन, सम काया ।

यही मानव जीवन का मूल्य है । यही सुख का स्रज्जाना है ज्ञान व चारित्र्य का सार है ।

चार सुख शब्द (श्रीठाण्णागजी के चौथे ठाणे)

१ सच्ची समझ (समकित) २ प्राप्त संयोग में संतोष-समभाव ।

३ वैराग्य (भोगों की अरुचि) ४ दुःख, कष्ट, उपसर्ग में शांति समता, धैर्य ।

चार कारण मे अतिशय ज्ञान होवे ।

१ शुद्ध हिंसा विषय-ममता रहित पण्य प्रमाण सहित आहार पानी करे ।

(१५९)

२ आमाही पाइकी छत को कम जागरण करे ।

३ कइको कइ स्थापनाय—बाँचम मनम करे ।

४ दिइया—अनुपयोगी बातें न करे ।

(इस चार मोड़ों को कसते करते से कुन्ज शम्भु
व ज्ञान गहरा होय है अतः सदा जागरति रखो)



ॐ

आत्महित शिक्षा

“गुणग्राहकता”

(१) गुण ग्रहण करने वाला सद्गुण का खजाना है।

(२) जिस गुण की अनुमोदना की जाय वह खुद में प्रवेश होता है।

(३) जिसकी निंदा की जाय उसका दोष खुद में प्रवेश होता है।

(४) हजार अवगुणों में से एक भी गुण ढूँढ़े वह समकृती।

(५) एक भी दोष ढूँढ़े वह मिथ्यावादी।

(१५४)

(१४) दोषप्रादी कमिपूनी है, गुणप्रादी मरय-
युगी है ।

(१५) दोषप्रादी मिथ्यात्वी है गुणप्रादी समकित्ती
है ।

(१६) दोष देखने वाला नरक की नाय बनाकर
अपने मायियों को नरक में ले जाता है ।

(१७) मान की मात्रा विशेष घटौ दोष दृष्टि
विशेष ।

(१८) दोषों का गुलाम दोष देखने की मुफ्त
गुलामी करता है ।

(१९) गुणी भूल से भी दोष नहीं देखता है ।

१ कलि कलह, भगदे कुसंग दो वहाँ कलिमुग ।
दोष देखने से ही भगदे होते हैं ।

(१५६)

(२०) सर्वोत्तम-व्यास्य भास्य में रहते हैं ।

(२१) कण्ठ्य—सबके गुण्य होता है ।

(२२) मध्यम—गुणी का भास्य होता है ।

(२३) व्यथम—दोषी का दोष देखो ।

(२४) व्यथमावय—निर्दोषी का भी दोष देखना है ।

(२५) विन्य पाप किये सरस्वती से दूकने का कण्ठ्य दोष देखना है ।

(२६) विन्य कष्ट के धरने का कण्ठ्य सबके गुण्य महय्य करना है ।

(२७) समदृष्टि (बिबेकी) गुण्य दोष को बराबर समझे किन्तु दोष कभी बिब को सुँह में महय्य कर रहा होय स्त्री जठरग्न में पचाकर अस्मिन्ध मुक्त का तारा न करे ।

(१५७)

(२८) समदृष्टि रूपी हंस गुणरूप दूध को ही पीवे, दोषरूप पानी को छोड़ देवे ।

(२९) जैसे विचार वैसा आचार जैसा आचार वैसा जीवन बनता है ।

“समकित बत्तीसी”

१. भोग के समय में भी उसे त्याग का स्मरण रहता है ।
२. श्री महावीर के समान अन्तःकरण और विचार रखे ।
३. विश्व मात्र का जो शिष्य है वही समदृष्टि है ।
४. स्वतः को सबसे बड़ा मानने वाला मिथ्यादृष्टि है ।
५. सब गुणों का अंश सो ही समकित ।
६. समकित की प्राप्ति अनंत पुरुषार्थ से होती है ।

(१५८)

- ७ जो दोषों में से गुण बूढ़े वह समदृष्टि ।
- ८ आत्मा का विश्वास यही निश्चय समकित है ।
- ९. समकित केवल ज्ञान का बीज है ।
- १० देह गुण के समान आत्मगुण समझने में आवे
यही समकित ।
- ११ समदृष्टि की बीतराग दृष्टि होती है ।
- १२ समदृष्टि को प्रत्येक समय में 'देह मेरा नहीं है'
देखी जायाचक आती है ।
- १३. मिथ्यास्वी बनिर है वह उस आवाच को नहीं
सुन सकता ।
- १४ मिथ्यादृष्टि बेहमय है और समदृष्टि आत्ममय
है ।
- १५ मिथ्यादृष्टि देह की चिन्ता करता है और सम
दृष्टि आत्मा की चिन्ता तथा मनन करता है ।

(१५६)

१६. शरीर से आत्मा को भिन्न समझने के लिये ही सकल शास्त्रों की रचना है ।
१७. आत्मा की परम शांतिमय दशा ही समकित है ।
१८. आत्मा की अशांत दशा ही परम मिथ्यात्व है ।
१९. समदृष्टि कर्म का कर्ज चुकाने के लिये सदा तैयार रहता है ।
२०. स्व स्वरूप में निमग्नता समकित तथा पुद्गल में निमग्न रहना मिथ्यात्व है ।
२१. समकित का अनुभव वचन गोचर नहीं है ।
२२. कषाय को छेड़ने से समकित की प्राप्ति होती है ।
२३. समदृष्टि को शरीर घघनरूप प्रतीत होता है ।
२४. सम्यक्त्वही अपने खुद के दोष प्रकट करता है ।

तहाँ मिथ्याहृदि दृष्टों के दोष ककट करता है ।

२४ समहृदि की प्रत्येक क्रिया आत्म सायक होती है ।

२५ शरीर की शौचादि क्रियाओं में भी अगाधि रहनी चाहिये ।

२६ जिसने जंश में बी-पुत्र-यम तथा शरीर से वरा-बी-यम करने जंश में समकित और तीव्रता में मिथ्यात्व ।

२७ अपूर्व जो समकित तथा पूर्वाप्तपूर्ण जो मिथ्यात्व ।

२८ पहले समकित और पीछे बेचककाम ।

२. समहृदि को अपसी देह पर भी ममत्व नहीं होता है तो फिर वह अन्य किछके शरीर पर ममत्व रखे ।

३१ गुणकारी हृदय म ममे तब तक समकित दूर है ।

३२ समहृदि हीरे मांथियों को बँकर मानता है ।

(१६१)

“कर्म स्वरूप ।”

१. आत्म स्वरूप पर आवरण वही कर्म ।
२. कर्म से आत्मा अनंत बलवान् है । इसलिये अनंत काल के कर्मों को क्षण में क्षय कर सकता है ।
३. कर्मरूपी पिंजरे में आत्मरूपी सिद्ध कैद है ।
४. मोक्षनीय कर्म भावना से क्षय हो सकता है ।
५. वेदनीय कर्म भोगना ही पड़ता है ।
६. प्रकृति और प्रदेश बंध योग से बंधते हैं ।
७. स्थिति और अनुभाग बंध कषाय से बंधते हैं ।
८. वेदनीय कर्म तीर्थंकर को भी भोगने पड़ते हैं ।
९. आयु कर्म पृथ्वी के समान है और शेष कर्म वृक्ष के समान हैं ।

(१६२)

- १० कर्म को अपनी आत्मा के सिवाय अन्य कोई भी शेषता तथा इन्द्र भी नहीं पकड़ सकता ।
- ११ वह कर्मात्म कर्म को बेदने में हर्ष और शोक क्यों ?
- १२ असंताप भविष्य में आये वाले दुःख को पढ़ाती है ।
१३. सारा भविष्य के सुख का मार्ग करती है ।
१४. मोहपीत कर्म की प्रकृति से शेष कर्म प्रकट करते हैं ।
१५. मोहपीत कर्म की सिद्धिद्वारा से सब कर्म सिद्धि पढ़ते हैं ।
- १६ एग सद्धि परिणाम बड़ी कर्म ।
- १७ क्यों क्यों कर्म विशेष प्रकृत किये जाते हैं त्वं त्वों शरीर छोटा बनता जाता है पञ्ची पार्थ यदि त्वानर जीव योनि में सम्म होता है ।

(१६३)

१८. चारों कपायों में प्रोथ मोखा है और शेष तीन दगायाज हैं ।

१९. मोहनीय कर्म जल्दी आता है और जल्दी ही भाग जाता है ।

२०. मोहनीय कर्म बिना घुलाये आता है और बिना निकासे ही मृदु भूत की तरह भाग जाता है ।

“कपाय”

१. जगत् में मान न होता तो क्षमी भय में मोघ प्राप्त हो जाता ।

२. संक्षपाय वाले को ही मत्संग का लाभ मिल सकता है ।

३. जहाँ ज्ञान है वहाँ कपाय नहीं है और जहाँ कपाय है वहाँ ज्ञान नहीं है ।

(११४)

४. ज्ञान का आधार रस रंग हो ही है ।
५. रंग होष के समान से सम्पूर्ण ज्ञान की शक्ति होती है ।
६. विषय-कथन को छोड़ने के बजाय आत्मा को ही छोड़ दिना । विषय-कथन छोड़ने से मोक्ष होता है ।
७. ज्ञानी के चेहरे पर भी शिवादित का बोध होने से ही कथन । कथनी शरणी के समान लोभाय है ।
८. महापुरुष महामुनीजी ज्ञान को भी नहीं समझ सके ।
९. महापुरुष कर्दकजी कोष को भी नहीं समझ सके ।
१०. मन्त्रीधनुष जीव माया स्वान को नहीं जान सके ।

(१६४)

११. राजर्षि प्रमन्नचन्द्र लोभ को नदी पदनाम सके ।
१२. श्री क्षालिगद्गरी राग को नदी संगम सके ।
१३. श्री हरिकेशी का जीव छेद को नदी संगम सदा ।

१४. सूक्ष्म कषाय सूक्ष्म शल्य के समान भयकर है ।

“भावना ।”

१. सारे जगत् के जीवों के साथ निर्धैर बुद्धि से ही मैत्री ।
२. किसी में अंशमात्र भी गुण देखकर खुश होना प्रमोद ।
३. दुःखी को देखकर अनुसम्पा लाना सो वरुणा ।
४. शुद्ध समकित के योग्य होना सो मध्यम भावना ।
५. क्रोधादि वषार्यों का शांत होना सो सम ।

(१६६)

६. मृत्ति के सिवाय अन्य अभिजापा न करना वह सविग ।
७. संसार के भय-भयान से कोरित होकर स्वयं में सम्यक् करना सो विवेक ।
८. महापुरुषों के वचनों में श्रित्ता सो आत्मा ।
९. सब जीवों को स्वात्म रूप समझना यही अनुकम्प ।
१०. सब को सत्य समझना वह विवेक ।
११. सब पर समभाव रखना यह सम ।
१२. वृत्तियों को बाहिर नही जाने देना वह कर्मात्म ।

“वचनामृत”

१. जिस कार्य से अनेक-शान्ति प्राप्त है उसे एक अशान्ति समर्पण करना है ।
२. मुक्ति ब्रह्म से अनुभव वह अमृत मुख्यार्थ है ।

(१६७)

३. जड़ को अपना ज्ञान नहीं है। वैसे ही अज्ञानों को अपना ज्ञान नहीं है। अतएव जड़ और अज्ञानी में क्या भिन्नता है ?
४. आत्मा का निश्चय हो जाय तो विषय-कषाय छूट जाय। आत्मा के अनिश्चय से ही राग-द्वेष हो रहे हैं।
५. अपनी आत्मा का बुरा करने में कुछ भी कसर नहीं रखी गई है।
६. विषय-कषाय का विरेचन करावे वही जिनवाणी।
७. 'हम ज्ञानी हैं' ऐसा कहने वाले खुद को ठग रहे हैं।
८. कसाता का उदय होने पर ज्ञानी तथा अज्ञानी की परीक्षा होती है। कसौटी के बिना पीतल और सोना समान दीखते हैं।

(११८)

६. आरम्भ, परिमल, विचल और कथल में रह हो
ससे मोल देना मुर्ते को दबा देने के बराबर है ।

१०. दम्भर्षी को अन्तर्मुख में मोल डाला है वहाँ
अन्तर्मुख के इच्छा को अन्तर्मुख कल तक भी मोल
नहीं होता ।

११. अन्तर्मुखी मनु में भी संसार का त्याग किंचित् ना ।

१२. आत्मी के बचनों को अज्ञानी बल्लभ से अज्ञ
है ।

१३. मनु की आत्मा के अन्तर्मुख विचलना अन्तर्मुख
है ।

१४. मनु के बचनों को नहीं समझता वह मनु का
विरोध का अशास्त्र करने के बराबर है ।

१५. अन्तर्मुखी से विरहित विचलना नहीं आत्म
नाथ है ।

(१६६)

१६. मोहभाव सही मिथ्यात्व है ।

१७. विषय-कषायी ज्ञानी के वचनों पर पैर रखकर चलता है ।

१८. प्रमाद के स्वरूप का ज्ञाता अप्रमत्त रहता है ।

१९. आत्मघर्म आत्मा में ही है ।

२०. देह में विराजमान आत्मा सुखी है अथवा दुःखी ?

२१. ज्ञानी देह से आत्मा की चिन्ता अनन्त रखता है ।

२२. आत्मा अपने स्वरूप को भूलकर भ्रमण करता है ।

२३. आत्म ज्ञान के बिना अन्य कोई उपाय नहीं है ।

२४. सिद्ध के समान मधका सामर्थ्य है ।

२५. आरम्भ परिमद की इच्छा यही आत्म घात है ।

२६. पुद्गलानंदी को आत्मज्ञान क्योंकर हो सकता है ?

२७. मोक्ष मार्ग के सिवाय शेष सब वन्मार्ग हैं ।

(१७७)

२८. देह के प्रति बल या मीठ के समान आरथ का सम्बन्ध है।

२९. देह बल है, आत्मा सुखदिर है।

३०. आत्मा को नहीं पहिचाने वह अनंत संसारी।

३१. जब आत्मा का कोई मास ही नहीं तो फिर मास अपमान किसका ?

३२. आचरण रहित ज्ञान की शर्तें करने वाला ज्ञान तथा अनंत ज्ञानी की अपरकथा करना है।

३३. रक्षक में भी शरीर और आत्मा की भिन्नता का ज्ञान होना चाहिये। ऐसे ज्ञान वाला ही समदृष्टि है।

३४. विषय-कथाय की इच्छा सात्वतों नरक में भी अर्पक है। यह बात समदृष्टि ही नमक कहता है।

(१७१)

३५. मर्ष और अग्नि से भी विषयकषाय मध्यकर हैं ।
३६. आरभ और परिमद दृष्टिविषय मर्ष हैं ।
३७. द्वेष करना नहीं, और तलना आरभ और परिमद ।
३८. राग करना नहीं और दित करना आत्म ज्ञान से ।
३९. स्त्री, पुत्र और धन के आवीन सो विषयार्थीन ।
४०. विषय को जिम्मे वश में किया उसने सारे विश्व को वश में किया ।
४१. एकान्त में विचारे कि-ये स्त्री, पुत्र तथा धन सुख वर्धक हैं या दुःखवर्धक ?
४२. विषय कषाय मय प्रवृत्ति से आत्मा का नाश होता है ।
४३. आरभ और परिमद महारोग हैं ।
४४. जिसे सुद का ज्ञान नहीं है उससे बढ़कर

(१५२)

अध्यामी तथा मिथ्याह्नि वृत्तण कीम हो सकता है ?

४५. आरंभ और पछिह सं मेम वह मिथ्यास्त्री दब
अमंड—संसारी का बहण है । समहहि बदासीन
पठा है ।

४६. आरिज-उहित काम म्बरुम है ।

४७. आत्मा को आत्म के समझ निर्बल रखो ।

४८. आत्म में जीने रजकल पटकता है वसी प्रकार
समहहि को आरंभ और पछिह लटकता है
हुत वा अनुभव होता है ।

‘वचनीयता घनाम मौन’

१. वचन शान्त मधुर साव, तथा कोमल होने
चाहिये ।

(१७३.)

२. अल्प बोलने वाले को अल्प पश्चात्ताप होता है ।
३. एक एक शब्द को मोती से भी मूल्यवान समझो ।
४. अप्रिय वचन विष से भी विशेष भयंकर हैं ।
- ५ जो आनन्द मौन में है वह बोलने में नहीं है ।
- ६ मौन मोक्ष का अनुत्तर मार्ग है ।
- ७ मौन वीतरागपद का अनुभव कराने वाला है ।
८. मौन विषय कषाय को रोकने का केन्द्रस्थान है ।
९. मौन समुद्र के समान गंभीर है ।
१०. मौन ही प्रभु महावीर का मुनिपन था ।
११. मौन आत्म-समाधि का गुप्त मंत्र है ।
- १२ मौन का उलटा नमो, याने नमस्कार करने योग्य ।
१३. मौन ही आत्मव्योति, ध्यान तथा निर्जरा है ।
१४. अनंत भूत और भविष्य के तीर्थंकर मौन धारण कर अपूर्ण से पूर्ण हुए हैं और होंगे ।

(१७४)

“शरीर”

- १ यह शरीर सिर्फ साढ़े तीन इन्च ज़मीन मांगेगा ।
- २ कष्ट मरु मूत्र व माज्जम है इसकी पिठा क्या ?
- ३ अंतिम अवस्था का प्रत्येक क्षण में स्मरण कर ।
- ४ चौदह एजुलोक में सब का कारण यह शरीर ही है ।
- ५ शरीर हाक मास का पिंड है, इसका मोह क्या ?
- ६ मोह साधन के लिए यह कामी की नाथ है ।
- ७ शरीर बन्ध की मयंकुर मूर्ति है ।
- ८ चौदह एजुलोक की संपत्ति से मायब भव की एक बड़ी जर्मत मूल्यवान् है ।
- ९ भित्ति जिससे प्राप्त होने यह पितामही मरमप ।
- १ तीर्थंकर भी सुत्तु से बेतकर साधधान बने ।

११ अनंत बार मानवभव निष्फल गया है । इस बार संपूर्ण सावधानी रख, अन्यथा यह भी निष्फल चला जायगा ।

१२. ज्ञानी का देह कर्म क्षय करने के लिए है ।

“मृषावाद बत्तीसी”

(१) असत्य वचन बोलने वालों का मुंह गंदी नाली के समान है ।

(२) असत्य वचन बोलने से नरक में जाना भय है ।

(३) सत्यभाषी चन्द्र से भी विशेष शीतल है ।

(४) मिथ्याभाषी अग्नि से भी विशेष भयंकर है ।

(५) सत्यवादी के स्पर्श से भूमि पवित्र होती है ।

(६) मिथ्याभाषी के स्पर्श से भूमि कलङ्कित होती है ।

(७) सत्यवादी संसार-समुद्र तिरता है और मिथ्या-

(१५६)

भाषी संसार में अमृतवत्पद तक पहुँचा है ।

(८) विष्णुवचन विष और शस्त्र से भी भयंकर है ।

(९) सत्य में ज्ञान, शरीर और चरित्र हैं ।

(१०) असत्य में द्वेष, विषय और कषाय हैं ।

(११) सत्य देवताओं को भी प्रिय है ।

(१२) असत्य नरक को घेरियों को भी अप्रिय है ।

(१३) सत्यभाषी ईश्वर है, विष्णुवचनी महावीर्यवान् ।

(१४) शस्त्र देकर भी सत्य की रक्षा करो ।

(१५) सब जगों का मुख असत्य है ।

(१६) असत्य १३ और १४ को नरक में ले जाया है ।

(१७) असत्य भाषी की जाया भी अनंत मुक्ति है ।

(१८) मयावली के विष नरक की सजा भी अपूर्य है ।

(१९) मयावली जोर के समान संसार समुद्र में प्रलय करता है ।

(१७७)

(२०) मृषावादी प्रत्येक समय नरक निगोद में प्रवेश करता है ।

(२१) सत्य चैतन्य है और मृषावाद जड़ता है ।

(२२) मृषावादी पग पग पर पतित होता है ।

(२३) मृषावाद हलाहिल विष है ।

(२४) मृषावाद निर्दयी दावानल है ।

(२५) मृषावादी का स्पर्श अग्नि से भी भयंकर है ।

(२६) सब विषों से मृषावाद का विष भयंकर है ।

(२७) मृषावादी अग्नि में शीतलता ढूँढता है ।

(२८) मृषावाद पिशाच से भी अनंत गुणा भयंकर है ।

(२९) सब रोगों में मृषावाद का रोग महा भयंकर है ।

(३०) मृषावादी में अनन्त दोष हैं ।

(१५८)

(३१) सुवाचाद् धर्मं बुद्ध का मारा करण है ।

(३२) सुवाचाद् एतन्नय धम मारा करण है ।

अग्निमन्नेश से भी सुवाचाद् धर्मव भर्षकर है ।

सत्य दांत सरोवर है कमर्षे स्थान करो ।

“इन्द्रियो”

(१) इन्द्रियो बंदर क सम्मान हैं । कर्में धाम के पित्रे
में कीर्ति करिये ।

(२) इन्द्रिय-विग्रह होमे से आत्मज्ञान होवा है ।

(३) इन्द्रियो के मज्जन आत्म में कीर्तना प्राप्त हो
अथ तो अज्ञ हो मोक्ष हो ज्ञान ।

(४) इन्द्रियो मरक और निगोह में जाने की सीदियो
हैं ।

(५) बिब राह जितना है और बिबल मेक जितना है ।

(१७६)

- (६) अग्नि को 'लुधा' में इन्द्रियों को 'लुधा' अनन्तगुणी भयकर है ।
- (७) इन्द्रिय विजय बिना स्वर्ग या मोक्ष की इच्छा मस्तक से पर्वत तोड़ने के समान है ।
- (८) इन्द्रियों का भोग भोगता यह सर्प को पकड़ कर उसका दात चखाद कर उससे अपनी ग्वाज खुजलाने से भी अनन्त भयंकर है ।
- (९) ज्ञानी चिन्ता करते हैं कि 'अल्पकाल के इन्द्रियों के सुख भोगकर अनन्त काल के नरक और निगोद की वेदना कैसे सहन कर सकेगा (बाल जीव) ।

“हितोपदेश”

- (१) संसाररूपी नाट्यशाला में मनुष्य नृत्य कर रहा है ।

(११) मृषावाद धर्म-बुद्ध का नारा करता है ।

(१२) मृषावाद राजन्य का नारा करता है ।

अग्निप्रवेश से भी मृषावाद धर्म का धर्मकर है ।

सत्य शक्ति सरोवर है हममें स्थान करो ।

“इन्द्रियो”

(१) इन्द्रियो बरकर क सधाम हैं । उन्हें ज्ञान के पित्रों में कैद करिये ।

(२) इन्द्रिय-विषय होने से आत्मज्ञान होता है ।

(३) इन्द्रियों के जमान अत्यन्त में लीकवा जात हो जाय तो आत्म ही मोक्ष हो जाय ।

(४) इन्द्रियों मरक चीर निगोद में जाने की सीढ़ियां हैं ।

(५) बिना राई जितना है और बिना मेह जितना है ।

नंदन वन के मुक्ताफल

१. अनतानंतावश्यक; स्वस्वरूपमेकीनता
२. विशेषावश्यक; ध्यान, अखंड जागृति में कीनता
३. मध्यमावश्यक, पठन, मनन, लेखन, उपदेश
४. अनिवार्य, आहार, विहार, निहार, व्यायाम आदि
५. अनावश्यक; विफथा, निदा, प्रमाद, मदादि
६. अनंत घातक; हिंसा, विषय, कषाय ॥ १ ॥
१. मोक्ष मेरा अनादि का जन्मसिद्ध हक है ॥
२. भव्य ! विचार कि अनंत बली आत्मा के पास कर्म कौन चीज है ?
३. पर अनंत बली हैं और मार्ग अनंत अल्प है ।
 उस अनंत दिशा की ओर अनंत बल से जाने
 के लिये हृद निश्चय होना चाहिए ॥ २ ॥

- (२) बिषय और कथाय आत्मा के बिरे कुपय है ।
- (३) बिषय कथाय हरी परवर से अफा सिर क्यों
कोकते हो ?
- (४) सर्व वरुने वासा मूर्ख है वो छिर सी-पुन-
वन अरम और परिपद से, मेम करने वासा
कैसा है ?
- (५) पापमय जीवन को पवित्र मय भावो ।
- (६) मय अमय का कारण एक मात्र शरीर हो है ।
- (७) इस शरीर पर चमकी न होती वो मक्की
मक्कर, और कही इसे का बावे ।
- (८) धर्म मित्र-नेत्र-गुरु-स्थायी और बंधु है ।
- (९) निग्रेह में गिरये, दुप बुझाने बही धर्म ।
- (१०) अघात का सम्भलीको कोक में है ।
- (११) मोहस्थी अग्नि से सारा संसार जल रहा है ।

(१८३)

१. एकोहे, एोमाणे, एोमाये, एोलोहे,
सो-हँ।
२. एोसहे, एोरुवे, एो गधे, रसे, फासे ॥६॥
१. भद्रता, चिन्तय, अनुकंपा और निराभिमानता यह
मूल पूंजी है। नहीं तो नरक, तिर्यच, गति
निश्चय ही है ॥७॥
१. उपादान का विचार करता है- वह समदृष्टि,
निमित्त को दोष दे वह मिथ्यादृष्टि ॥८॥
१. ८४,००,००० जीव योनि में इस आत्मा से भी
कोई अधम प्राणी है ? ॥९॥
१. ८४,००,००० जीवयोनि में इस आत्मा से भी
कोई विशेष पुण्यशील है ?
१. द्रव्य से मैं एक हूँ, असग हूँ, शरीर से रहित हूँ,
क्षेत्र से असंख्य लोकाकाश प्रमाण हूँ। काल से

१ इस हाथ, मांस, कोड़ी, घृण, पित्त, कफ और
महामूत्र की चमड़े की बैली में^१ वह जीव इच्छा
पूर्वक जीव है कछुके मोह से अमृत अथ प्रमत्त
हुये हैं जब तो विनाश सेवा चाहिये ॥११॥

२ असंख्य बेदियों का परिचय काशी अग्नि से
अमृत अर्थात् प्रतीत हो ऐसी वैराग्य दूरत और
वह स्थिति तो अमृत वस्तु प्राप्त हुई सिर्फ सम्यक
ज्ञान के आभास से भय भयम न मिटा ॥१२॥

३ अत्येक समय पर अपने को महावीर मान ।

बीतरागी बन ।

४ बीतरागी बचन बिचार बर्तन व विवेक रख ।

५ साक्षात् म अमृत अस्वर ।

६ अत्येक वसण पर अत्येक आर्तुत रख ।

७ अमृत गोवन नाचनावर ॥१३॥ ८ ।

(१८४)

अग्नि से अनंत भयकर समझ ॥१४॥

१. वीतराग दशा से चरम शरीरी और सराग दशा से अनंत ससारी ॥१५॥

१. प्रभव, विलायती, रोहाचोर, संयति, परदेशी राजा, चंडकोशिक सर्प और सो इन्हीं को मेरे अनंत नमस्कार ॥१६॥

१. सम्यक्त्वी अरिहंत, सिद्ध, जिन केवली, वीतरागी, अयोगी, अशरीरी, दशा का अनुभव करता है ॥१७॥

अपनी डायरी

- १ इस साल कितने गुण बढ़ाये ?
- २ विषय, कषाय पर कितना विजय किया ?
- ३ प्रमाद का कितना विजय किया ?

- ४ आत्म कल्याण के लिए कितना समय निश्चय ?
- ५ पाप कर्म में कितना समय निश्चय ?
- ६ आरंभ परिमल से मोह चटाया या बढ़ाया ?
७. क्रोध को कितनी मात्रा में चटाया ?
- ८ मान का कितना वर्धन किया ?
- ९ माया को त्याग कर कितनी सरलता प्राप्त की ?
- १ काम बरतते सुध्या चली या बढ़ी ?
- ११ पंचेन्द्रिय के विषय विचार कितने बड़े ?
१२. विषय कथाय का विषय कितना बड़ी है ?
- १३ यह सदा सकल गन्ध या निष्कल ?
- १४ जीवन का सदुपयोग किया या दुर्दुपयोग ।
- १५ इस सदा क्या करता चाहते हो ?
- १६ ऐसा कथमय जीवन क्या बढ़ाओगे ?
१७. क्या अयध्व का भरोसा है ?

(१८७)

१८. आज-मृत्यु हो जाय तो कौन सी गति मिले ?
१९. आज नहीं तो कल निश्चित ही मरण है ?
२०. विषय कषाय मय जीवन चाले की एक क्षण अनन्त भयकर है; तीन दिन की विषयाशा से कुठरिक्की सातवीं नरक में गये, तो पाठक ! अपने पाप का या पाप के फल स्वरूप गति का विचार कीजियेगा ।

अपूर्व वचनामृत ।

१. वीतरागी भाव बिना सब हेय ।
२. केवल प्रभु का परोक्ष आनन्द ले वह ज्ञानी ।
३. वीतरागी का परोक्ष आनन्द ले वह समदृष्टि ।
४. राग, द्वेष और लोभ यह अज्ञानी के सन्तान हैं ।
५. ज्ञान, परित्र यह ज्ञानी के सन्तान हैं ।

(१८८)

१. समदृष्टि कायुत दशा में जीर स्वप्ने में विष,
विषय, कषाय को सिद्ध सर्व जीर अविष
समझता है ।
७. जहाँ ज्ञान है वहाँ विषय कषय का अपार
होछा है ।
८. आसय ने सीम डोच्यो बरा किता ।
९. अतीन्द्रिय सुखानुभव करे वह समदृष्टि ।
१. दृष्टाक्षय वही सिद्धाक्षय है ।
११. वेद कीहर है जीर आसय वेद है ।
१२. निद्रा रूप में समझ करे वही ज्ञानी ।
१३. अपन को वेद रहित अनुभव करमे वाचा ज्ञानी ।
१४. सब प्रसंगों में सम्पश्य रहे वही समदृष्टि ।
१५. मन वचन कषय जीर इन्द्रियों का विरोध
करना । वह इन्द्र संहर ।

(१८६)

१६. राग, द्वेष और मोह का अभाव भाव संवर है ।
१७. राग, द्वेष, मोह का नाश यही सामायिक है ।
१८. पुद्गल सग से जीव असुन्दर है ।
१९. ज्ञान सग से ही जीव सुन्दर है ।
२०. ज्ञान व्योति से विषय कषाय का नाश होता है ।
२१. देह और इन्द्रियों के आधीन न रहे यही मुनि ।

आस्तिक यंत्र—

१. राजमतिजी ने रहनेमिजी को विषय भोग भोगने की अपेक्षा मृत्यु का आलिङ्गन करना श्रेष्ठ कहा ।

२. अरण्यक को संसार में फसा देखकर माता ने (अपने प्रिय पुत्र को) गरम शिला पर सथारा करने की पुत्र ने सहर्ष स्वीकारी ।

(१८८)

- ६ समदृष्टि आशुत बरा में और स्वयं में ब्रह्म
विषय, कषाध को छिह, धर्य और स्वनिबद
समझता है ।
- ७ कहाँ ज्ञान है वहाँ विषय कषाध का अभाव
होता है ।
- ८ आशुत ने तीस कोक्या बरा किया ।
- ९ अतीव्रिय सुकानुभव करे वह समदृष्टि ।
- १० वेदज्ञान वही विद्याज्ञान है ।
- ११ वेद संक्षिप्त है और व्याख्या देश है ।
- १२ निज रूप में समझ करे वही शास्त्री ।
- १३ अरने को वेद रक्षित अनुभव करने वाला ज्ञानी ।
- १४ सब प्रसंगों में सम्भाव रहे वही समदृष्टि ।
- १५ मन कषय राज्य और शक्तियों का निरोध
करता । वह ब्रह्म संक्षिप्त ।

(१८६)

१६. राग, द्वेष और मोह का अभाव भाव संवर है ।
 १७. राग, द्वेष, मोह का नाश यही सामायिक है ।
 १८. पुद्गल सग से जीव असुन्दर है ।
 १९. ज्ञान संग से ही जीव सुन्दर है ।
 २०. ज्ञान ज्योति से विषय कषाय का नाश होता है ।
 २१. देह और इन्द्रियों के आधीन न रहे वही मुनि ।

आस्तिक यंत्र—

१. राजमतिजी ने रहनेमिजी को विषय भोग भोगने की अपेक्षा मृत्यु का आलिङ्गन करना श्रेष्ठ कहा ।

२. अरण्यक को संसार में फसा देखकर माता ने (अपने प्रिय पुत्र को) गरम शिला पर सथारा करने की धी और पुत्र ने सहर्ष स्वीकारी ।

(१६०)

३ बदाई राजा ने अपने प्रिय पुत्र को राज्य दे दिया ।

४ कीर्तिष्णक मुनि ने अपने शिष्य (पुत्र) को अपने आराधनाार्थे सिद्धी का मन्त्र होते-हीन समर्पण रखा ।

५ लब्धकजी ने अपने ४२६ शिष्यों को धर्म आराधनाार्थे पाणी में पिबाना देन समर्पण रखा ।

६ अंबडजी ने अचीर्यमठ की रक्षा के लिये ५० शिष्यों को उच्छर रती में संघाट करने की आज्ञा दी ।

७ सुररोम मठ ने राजी के स्वर्ण योग व धौग राजी पर काम्य जेठ समर्पण । अन्त में राजी का सिद्धासन दृश्य ।

८ सुररोम भाषक की आज्ञा है

(१६१)

भय होते हुए भी प्रभु दर्शन की आशा थी ।

६ पोटीला (देउ) ने अपने स्नेही तेतली प्रभान को उपसर्ग देकर संयम दिलाया ।

१०. घन्नाजी ने शालिभट्टजी को कायर कहा और बत्तीस स्त्रियों को एक साथ छुड़ाना चाहा ।

११. चूलनी पिता आदि श्रावकों को ध्यान में ढिगायमान देखकर उनकी माता व स्त्रियों ने उनको उपालम्भ दिया ।

मैं कौन और कैसा ?

१. महावीर जैसा समभावी ।

२. मेघरथ राजा जैसा अहिंसक ।

३. अरण्यक श्रावक जैसा सत्यवादी ।

४. निन्दित श्रावक जैसा अव्यक्त व्रत का आराधक ।

(१६०)

३. ज्योतिष राजा ने अपने प्रिय पुत्र को एम्ब व
दिया ।

४. कीर्तिष्क मुनि ने अपने शिष्य (पुत्र) को
अपने आराधनाार्थे सिद्धी का मन्त्र होने देकर समभाव
रखा ।

५. लक्ष्मणजी ने अपने ४९९ शिष्यों को धर्म
आराधनाार्थे शायी में बिछाते देकर समभाव रखा ।

६. जम्बवन्ती ने अपनी बालिका की रक्षा के लिये
७० शिष्यों को बन्धु रीति में संभाल करने की
आज्ञा दी ।

७. सुरसेन छेठ ने अपनी के अथ भोग व भोग
शुद्धी पर काय नेत्र समझा । अन्तर्धर्म शुद्धी का
सिद्धान्त ब्रह्म ।

८. सुरसेन भगवन् की माया है ।

(१३३)

६. जगदी उगारने वाले लंकाव जी लैसा समतावान ।
७. भयव खोर लैसा धर्म में महान्वित ।
८. गौतम गणधर लैसा तत्त्वशास्त्रक ।

विषय कथाय रक्त.

- रक्त क्रोध से—लंकाव जी को भगवद्भक्त करना पड़ा ।
 रक्त मान से—बादरगुणी जी का केवलज्ञान रुक गया ।
 रक्त माया से—भागीप्रभु के जीवको स्त्री होना पड़ा ।
 रक्त लोभ से—लंकाव जी को आहार में अंतराय रही ।
 रक्त राग से—शांतीभद्र जी को मोक्ष न मिला ।
 रक्त द्वेष से—हरिकेशीमुनि चाटालकुल में उत्पन्न हुए ।

- रक्त से—प्रसन्नचन्द्र राजर्षि ध्यानमें डिग गये ।
 -ब्रह्मदत्त के जीवने नियाणा किया ।

(११९)

- ४ सुदर्शन घेठ बीछा सीकरबत ।
- ५ पुष्पीय भावक बीछा संतोषी ।
- ७ जंकुमार बीसा बैराम्यबत ।
- ८ गजसुकुमार बीसा जमार्बत ।
- ९ काहुनकजी बीसा प्यामी ।
- १० जंककजी के ७०० शिष्यों बीसा जट में दद ।
- ११ भरखक मुनि बीसा निमबर्बत ।
- १२ परदेशी राजा बीसा मरक ।
- १३ सुदर्शन भावक बीसा बर्म में दद ।
- १४ जंककजी के ४२६ शिष्यों बीसा बैरबान ।
- १५ बदमबाबा बीसा गुजभाइक ।
- १६ भजु नमाजी बीसा स्वरोर दरोक ।
- १७ संवदि राजा बीसा बर्म में जयार्बत ।
- १८ रोहाचोर बीसा निबबायी सुनने बाबा ।

(१६५)

संसार चक्र.

नाम	अंतर्मुहूर्त में जन्ममरण कायस्थिति	
		१
पृथ्वीकाय	१२८२४	असंख्यातकाल
अपकाय	१२८२४	"
तेजकाय	१२८२४	"
वायुकाय	१२८२४	"
प्रत्येक वनस्पतिकाय	३२०००	"
		२
साधारण वनस्पतिकाय	६५५३६	अनंतकाल

१. १२८२४, ६५५३६, ८०, ६०, ४०, २४, इतने जन्म मरण उपरोक्त जीव सिर्फ एक अंतर्मुहूर्त में ही करते हैं । २ असंख्य काल का अर्थ असंख्य अवसर्पिणी और उत्सर्पिणी और अनंतकाल का अर्थ २॥ पुद्गल परावर्तन ।

मादक द्रव्य से—शेराक राजर्षिको प्रमाणावस्था प्राप्त
हुई ।

रससे— मंगु आचार्यको बच होय पड़ा ।

स्त्री से— कुम्हरीकमी को भी सावनी सरक
में डालना पड़ा ।

अष्टम मम से—विपुलमध्य सावनी सरक में डाला
है ।

उपरोक्त विषय सधम में न आये तो छामी
पुरुषों से समझियेगा । इस चक्र में अष्टम कोष,
माम माया कोम व राज्य, रूप गीत, रस, स्त्री का
विषय किन्ता अर्थकर है इसका संक्षेप में चित्र
लीखा है ।

(१६५)

संसार चक्र.

१

नाम अंतर्मुहूर्त में जन्ममरण कायस्थिति २

पृथ्वीकाय	१२८२४	असंख्यातकाल
अपकाय	१२८२४	"
तेजकाय	१२८२४	"
वायुकाय	१२८२४	"
प्रत्येक धनस्पतिकाय	३२०००	"
साधारण धनस्पतिकाय	६५५३६	अनंतकाल

१. १२८२४, ६५५३६, ८०, ६०, ४०, २४, इतने जन्म मरण उपरोक्त जीव सिर्फ एक अंतर्मुहूर्त में ही करते हैं । २ असंख्य काल का अर्थ असंख्य अवसर्पिणी और उत्सर्पिणी और अनंतकाल का अर्थ २॥ पुद्गल परावर्तन ।

(१६६)

बेइन्ड्रिय	८०
तेइन्ड्रिय	६०
बोरिन्ड्रिय	५०
असंखी पंचेन्ड्रिय	९४
संखी पंचेन्ड्रिय	अंतमु हूत
नारकी	१ ० वर्ष
देवदा	१ ०० वर्ष

२० • सागर

शरीर

१. यह शरीर एक बीर्य कुटी है इसका मोह बीन रखे ।

२. दूसरों के सुत शरीर अपनी आँवों से जलते हुए देखकर अपने शरीर का मोह नहीं छुड़वा है ।

३. जिस बीर्य २ सागर में धर्म का आराधन करके मोह में न जाय तो वह निरजय से सागर में जाता है ।

(१६७)

३ मनुष्य अगर शरीर के समान ही आत्मा की चिन्ता न करे तो इसी भव में वह मोक्ष मार्ग के अत्यन्त नजदीक पहुँच जाता है ।

४. शारीरिक सुख पराधीन है परन्तु आत्मिक सुख स्वाधीन है ।

५. शारीरिक सुख क्षणिक है परन्तु आत्मिक सुख शाश्वत है ।

६ शरीर यह मिट्टी का एक पिण्ड मात्र है परन्तु आत्मा यह सूर्य के समान प्रकाशित है ।

आप कैसे हैं ?

१ समदृष्टि विश्वमात्र से प्रेम करता है ।

२ समदृष्टि विश्व के हित में अपना हित सम-
कता है ।

३ गुप्त से गुप्त विचारों को भी पवित्र रखियेगा ।

४ विचारों का शत्रु से दूरान्धो या मन में
झिपाओ तबपि विचारों का असर तो दूसरे पर होना
ही है ।

५ अगर आपको सम्बन्ध से प्रेम है तो दूसरे
के दोष के लाल पर गुण प्रदण्य कीजियेगा ।

६ अगर आपको मिथ्यात्व से प्रेम हो तो दूसरे
के गणों की ओर लक्ष्य न कर केवल दोष देखियेगा ।

७ सम्बन्धदर्शन और मिथ्यादर्शन इन दोनों में
से जिनका व्यापार आपको पसंद और हितकर हो
वही कीजियेगा । सुझेय कि बहुत —

८ भंगी बिछा दूँ दया है और अच्छा इतर ।

बैस ही दोषी बाव दूँ दया है और गणी गुण ।

९ इस मोठी और बीभा सदा माँस ओजवा

हे वैसे ही गुणी गुण और दोषी दोष ।

१०. जैसे विचार वैसे आचार और जैसे आचार
वैसी गति तथा मोक्ष भी मिल सकता है ।

११. गुणप्राप्तक द्वेषी को मित्र और दोषप्राप्तक
मित्र को भी द्वेषी बनाता है ।

१२. आर्य की गुणदृष्टि और अनार्य की दोष-
दृष्टि होती है ।

१३. गुणदृष्टि स्वर्गीय और दोषदृष्टि नारकीय
होती है ।

१४. गुणप्राप्तक विश्व का मित्र है, और दोष
प्राप्तक विश्व को अपना शत्रु बनाता है ।

१५. गुणप्राप्तकता वशीकरण मंत्र से विश्व
वशीभूत होजाता है ।

१६. गुणप्राप्तकता सद्गुण का निधि और दोष-

दृष्टि दुराचार का मंदार है ।

१७ गुणदृष्टि सदाचार और दोषदृष्टि दुराचार है ।

१८ गुल्ली शीछवान है दोषी स्वमिचारी है ।

१९ गुणदृष्टि धर्म सम्मुख है और दापदृष्टि विमुख है ।

अमृत्य विचार ।

१ राग करके प्रायश्चित्त करना वह कीचड़ में पैर धाँसकर न धोने के बराबर है ।

२ जिसने अंश में महत्त्वार्थ की रक्षा विरोध की जाय वहने ही अंश में महत्त्वबुद्धि कार्य करने की शक्ति प्रयत्न होती है । जीवन व्यथी सार है ।

३ बीक रक्षा करना वह आत्मरक्षा करने के बराबर है । आत्म रक्षा वह विरह रक्षा है ।

४. वीर्य रक्षा करनी, यह एक प्रजावत्सल, नीति-परायण राजा की रक्षा करने के बराबर है, क्योंकि वीर्य यह शरीर का सच्चा राजा है।

५. इच्छु में से रस निकल जाने पर जैसे छिलके मात्र रहते हैं, वैसे ही वीर्य के नाश में शरीर सत्व-हीन हाड पिंजर मात्र रहता है।

६. सर्वथा ब्रह्मचारी रहने वाले पुरुषों ने ऐसे सयोगों में कभी नहीं आना चाहिये, कि जिससे ब्रह्मचर्य के भग का प्रसंग आपड़े।

७. नींव (बुनियाद) की दृढ़ता पर ही जैसे सारे मकान की दृढ़ता का आधार है वैसे ही वीर्य की रक्षा पर ही जीवन की दृढ़ता का आधार है।

८ विशेष पुत्रोत्पत्ति करना, यह आर्थिक दृष्टि से देश की दुर्दशा करने के बराबर है।

६ जो मनुष्य अपनी जी को छोड़कर अन्य की के पास जाता है वह जानबूझकर अपनी जी को सुराक्षारिणी बनाता है और फिर सुराक्षारणी बनता है।

७ संसार में मित्रता मझे ही रहे परन्तु विद्वत्ता मत करो। स्पर्धा मझे ही करो किन्तु ईर्ष्या मत करो।

८१ एजी मनुष्य के उपदेशोंमें स्वार्थ का अंश अजरम रहता है बीठपग का उपदेश एकान्त पर मार्गोपदेश है।

८२ एक मात्र और एक लोक का व्यापारिक वस्तु के क्रिय सत्ता करण है।

८३ साहे की बंजीर शरीर के कल से तोड़ी जा सकती है परन्तु माह की बंजीर अन्य किसी शक्ति से नहीं तोड़ी जा सकती है सिवाय एक देणाय के।

१४. निदा करने से अपनी शुद्ध क्रिया भी दूसरे की अशुद्ध क्रिया के परावर हो जाती है ।

१५. जहाँ कदापद होता है वहाँ दिन नहीं हो सकता ।

१६. जो मनुष्य लोभ को अपने आधीन करता है वही संसार में मया स्वामी योगी और संसार से सर्वथा वियोगी है ।

१७. क्षमा गुण के अभाव में अन्य गुण उतने ही निरर्थक हैं, जितने किसी अंक के रहित विदियों ।

१८ जिस देश, जाति, क्रिया समुदाय में प्रेम का अभाव होता है, वह देश, जाति किंवा समुदाय अज्ञान से पूर्ण है अर्थात् मिथ्यात्वी है ।

१९. परदोष को प्रकट करने का स्वभाव, यह स्वदोष की वृद्धि करने वाला है, और यह दुर्गति

(२०९)

६ जो मनुष्य अपनी स्त्री को छोड़कर अन्य स्त्री के पास जाता है वह जानबूझकर अपनी स्त्री को दुष्टचारिणी बनाता है और दुष्ट दुष्टपाटी बनता है ।

७ संसार में भिन्नता भले ही रहे परन्तु विद्वत्ता मत करो । स्वार्थ भले ही करो किन्तु ईर्ष्या मत करो ।

८ सभी मनुष्य के कर्मेश्वरों स्वार्थ का धरा भक्षक रहता है नीचराग का कर्मेश्वर स्वार्थ पर मार्गोपदेश है ।

९ एक बात और एक शोक यह व्यापक कलत्र के जिव सदा कारण है ।

१० लोहे की जंजीर शरीर के बल से तोड़ी जा सकती है परन्तु मोह की जंजीर अन्य किसी शक्ति से नहीं तोड़ी जा सकती है सिवाय एक वैराग्य के ।

(२०३)


१४ निंदा करने से अपनी शुद्ध क्रिया भी दूसरे की अशुद्ध क्रिया के घरावर हो जाती है ।

१५ जहाँ कदाग्रह होता है वहाँ हित नहीं हो सकता ।

१६. जो मनुष्य लोभ को अपने आधीन करता है वही संसार में सच्चा स्वामी योगी और संसार से सर्वथा वियोगी है ।

१७. क्षमा गुण के अभाव में अन्य गुण उतने ही निरर्थक हैं, जितने किसी अंक के रहित विदियाँ ।

१८ जिस देश, जाति, किंवा समुदाय में प्रेम का अभाव होता है, वह देश, जाति किंवा समुदाय अज्ञान से पूर्ण है अर्थात् मिथ्यात्वी है ।

१९. परदोष को प्रकट करने का स्वभाव, यह स्वदोष की  करने वाला है, और यह दुर्गति

(२४)

अपसाधारण कारण है, और यही मिथ्यात्वा का प्रत्यक्ष है ।

२० आर्य कहा है जो त्याग करने योग्य व्यर्थ से दूर रहता है । अनार्य वस्तु विपरीत है ।

१ किसी के शरीर का त्याग करना इसी का नाम हिंसा तो है ही किन्तु द्वेष बुद्धि से किसी को मानसिक दुःख दम्य वह भी हिंसा है ।

२२. यदि सब के मुख से अशुभ की वृद्धि होती है तो बोधदृष्टिवाला समदृष्टि बन सके ।

ज्ञान शतक

(१) मोह निद्रा से ज्ञान-वस्तु का मारा होता है ।

(२) भ्रमण करने से बधावत आती है और बधावत से भीड़ आती है इसी प्रकार नीचसी स्थल

जीवा योनि में भ्रमण करने से जीव को थका-वट लगी है और इसको उतारने के लिये मोह निद्रा में यह पामर सोया है। ज्ञानी पुरुष जगाते हैं किन्तु यह पामर नहीं जगता।

- (३) मोह निद्रा से विचार शून्य हृदय बन जाता है।
- (४) मोह पिशाच ज्ञानी के तत्वों पर विचार नहीं करने देता।
- (५) जीवों के गले में काल की फाँसी लगी है डोरी खींचते ही प्राण पक्षी उड़ जायेंगे।
- (६) दूसरे के मृत्यु की चिन्ता होती है किन्तु खुद की मृत्यु की चिन्ता नहीं होती।
- (७) गर्भ में आते ही आयु घटने लगती है किन्तु आयु घटने का न गर्भ में भान था और न वर्तमान में है।

- (८) कुत्ता मरकर बेब और बेब मरकर कुत्ता जाऊँस मरकर भंगी और भंगी मरकर जाऊँस होना है यह हमें की विनिवृत्त है ।
- (९) मैं भवेच्छा आया हूँ और भवेच्छा जाने जाऊँ हूँ इतना ही ज्ञान हो तो काफी है ।
- (१०) जैसे पिता पुत्र के मुँह को बँधकर सम्राज्य में से काता है वही प्रकार आत्मा शारीरिक मुँह को बँधा कर संसार में परिभ्रमण कर रहा है ।
- (११) जन्म हुआ तब शरीर साब म बा और मरने पर भी शरीर साब मही बका सकेगा शरीर तो यही बका रहने वाला है जिसे बकाकर विजय व लोही प्रसन्न होंगे । यह अन्नादि का विशास है ।
- (१२) श्री पुत्रादि का सम्बन्ध तो जोड़े ही दिनों में

हुवा है और वह भी छूट जायगा ।

(१३) इस शरीर में प्रशमा के योग्य कौनसा पदार्थ है ?

(१४) स्त्री और पुरुष का शरीर गन्दी नाली है पुरुष के गन्दे नाले में नौ नाले हैं और स्त्री के गन्दे नाले में ग्यारह नाले हैं ।

(१५) शरीर रूपी गन्दे खाले में कृमि-कीड़े-अलसिये कलथला रहे हैं ।

(१६) असंख्य समुद्र के जलसे स्नान करने पर भी यह शरीर शुद्ध नहीं होगा । किन्तु असंख्य समुद्र के जल को यह शरीर गंदा बनायगा ।

(१७) मनुष्य शरीर मिलना अत्यन्त मुश्किल है उससे भी मनुष्यत्व मिलना अत्यन्त कठिन है ।

(१८) मनुष्यत्व मोक्ष जैसा पवित्र व महंगा है ।

(२०६)

- (२४) मोह निद्रा का साम्राज्य तीन लोक में है ।
- (२५) एक म्यान में दो तलवार का समावेश नहीं हो सकता उसी प्रकार देह ममत्व व आत्म ज्ञान दोनों नहीं रह सकते ।
- (२६) देह भान भूल जाने से ही आत्म ज्ञान होता है ।
- (२७) देह भान भूलने से निद्रा आती है और शरीर को थकावट दूर होती है वैसे ही देह भान भूलने से ज्ञान दशा जागृत होती है और अनंत काल का कर्म बोझ दूर होता है और आत्मा शुद्ध होता है ।
- (२८) मोह रूप अग्नि से विश्व जल रहा है ।
- (२९) विषय वासना से विश्व अन्धा बना है ।
- (३०) सुखी होने के लिये रेशम के कीड़े अपने शरीर

(२१०)

पर रेशम पखोवते हैं किन्तु बसते वे हुकी होते हैं जैसे ही पुत्र पत्न्यादि के बन्धन से मनुष्य हुकी होता है ।

(२१) वन में बाबामक अग्रा अग्रा सुकी होने के लिये शौक किन्तु बाबामक में गिरकर मर गये इसी प्रकार अज्ञानी संसार बाबामक में सुकी होने के लिये शौक है किन्तु हुक बाबायन में गिरकर भ्रम हो जाते हैं ।

(२२) जानवर द्विवाहित का विचार नहीं कर सकते । वसी मकर अज्ञानी भी बहुत जीवन व्यतीत करके अस्मभाव करण है ।

(२३) बिचारों का आचार न समझ भी आग ठग्य है ।

(२४) माद दधि विष सर्प से भी विशेष भयंकर है ।

- (३५) मिथ्यात्व रूप पिशाच आत्मा का नाश करता है ।
- (३६) मोह निद्रा द्रव्य निद्रा से अनन्त भयंकर है ।
- (३७) विषय कषाय प्रवृत्ति पाखण्ड वृत्ति है ।
- (३८) ज्ञान की बातें करने वाले बहुत हैं किन्तु विचार सा आचार रखने वाले विरले हैं ।
- (३९) अज्ञानी ज्ञान गज की सवारी त्यागकर विषय कषाय रूप गधे की सवारी करके अपने आपको दुर्गति में ले जाता है ।
- (४०) तत्त्वों का ज्ञान यही सम्यक् ज्ञान है ।
- (४१) तत्त्व की रुचि प्रतीति यह सम्यक् दर्शन ।
- (४२) कषाय से निवृत्ति यह सम्यक् चारित्र ।
- (४३) आत्म शुद्धि यही सम्यक्त्व
- (४४) ज्ञानी शत्रु, मित्र स्व-पर का भेद भूलकर

(२१०)

पर रेशम फोड़ते हैं किन्तु बसने वे हुकी हों
हैं जैसे ही पुत्र बन्धि के बन्धन से मुक्त
हुकी होता है ।

(३१) वन में राबानस कण्ड अण्डा सुली होने के
लिये दीया किन्तु राबानस में गिरकर घर का
इसी प्रकार अण्डामी संसार राबानस में सुली
होने के लिये दीये हैं किन्तु तुल राबानस
में गिरकर भस्म हो जाते हैं ।

(३२) जानवर द्वादिष का विचार नहीं कर सक्य ।
वसी मगर अण्डामी भी पशु का जीवन बर्तीत
करके अस्मक्य करता है ।

(३३) बिचारी का आचार न रक्ष्य भी आरा ठग्य
है ।

(३४) मोह दृष्टि निच सपने से भी विरोध भयंकर है ।

(५२) समभाय चन्द्रमा मे शीतल है पर विषय
कषाय के भाव अग्नि से भी भयंकर हैं ।

(५३) विषय कषाय की घातपीत श्रोता य यक्षा
दोनों को नरक में ले जाती है सो उसका आच-
रण करने वाले की क्या दशा होगी ?

(५४) संतोषी विश्व को पावन करता है ।

(५५) लोभी विश्व में कलंक रूप है ।

(५६) संतोषी संसार समुद्र तैर जाता है पर लोभी
संसार समुद्र में डूब जाता है ।

(५७) समभावी समुद्र जैसा गम्भीर है उसमें सब
गुण रूपी नदिया आकर मिलती हैं ।

(५८) कषाय दावानल है उसमें सब गुण रूपी चंद-
नादि जलकर भस्म हो जाते हैं ।

(५९) समभायी को देवता नमस्कार करते हैं ।

सबको भाई मित्र सब समझते हैं ।

(४५) प्यारी नीच कुनबे रुपी पापास को भाव में
बैठकर संसार समुद्र तैल्य चाहते हैं ।

(४६) मुझ रुपी बिह में अग्रिम बचन बोझनेवाली
बिह रुपी भागिन रहती है वह अपना बिह
दिरम में पैदावी है ।

(४७) बाजों रुपे इन्धम मिहने पर भी किसी की
निहा न सुनो और न करो ।

(४८) सत्य बर्म का मया होया हो वो बसकी रक्षा
के लिये बोझो अपना मौन रहो ।

(४९) बोझने में सौ दबा हाति है और न बोझने में
सौ दबा काम है ।

(५०) निन्दक का बचन भागिम से भी भयंकर है ।

(५१) एक बक राजर को मोती से भी मर्हंगा समझे ।

(२१५)

(६६) विषय कषाय से बचने का उपाय एक विवेक है ।

(७०) विषय कषाय का साम्राज्य तीन लोक में है ।

(७१) चौरासी लाख जीव योनि में भटकाने वाला सिर्फ एक विषय-कषाय है ।

(७२) विषय कषाय ही ससार है ।

(७३) विषय कषाय दावानल में अज्ञानी शीतलता दूढ़ते हैं किन्तु वे भस्म हो जाते हैं । (पतंगवत्)

(७४) विषय कषाय अनत-ज्ञानी से निन्दित होने पर अज्ञानी पवित्र मानते हैं ।

(७५) विषयी-कषायी विश्व का गुलाम है ।

(७६) अज्ञानी को विषय-कषाय का भूत लगता है ।

(७७) विषय-कषाय का भूत अनंत पुण्य को नष्ट करता है ।

(२१४)

कपासी से नारकीचे नेरिये भी झुका करते हैं ।

(६०) समभासी रेशताफ़ों का पूज्य है ।

(६१) सब पापोंका मूक यक कषाय है ।

(६२) कषाय नरक सिगोद की खीड़ी है ।

(६३) कषाय झोड पूर्व की तपस्वा को मरु करता है ।

(६४) कषायी सुद बकता है और औरों को जल्यता है ।

(६५) विषय-कषाय हज़ारक विष से भी भयंकर हैं ।

(६६) विषय-कषाय के बिचार मात्र से भीय मरक में जाते हैं तो विषय-कषाय बढ़ाने वाली का क्या होगी ?

(६७) अकृतकाल तक विषय कषाय का सेवन किया फिर भी तपि न हुई और न होगी ।

(६८) विषय कषाय की मूर्खा से संस्पर्श मूर्खित हैं ।

(२१७)

- (८६) मेरी भूल बताने वाला मेरा मित्र है उस पर क्रोध क्यों करूँ ? ज्ञानी ऐसा विचारते हैं ।
- (६०) क्रोध करने वाला दूसरों को क्रोध करना सिखाता है ।
- (६१) परके हित के लिये परोपकारी अपना सर्वस्व दे देते हैं मुझे क्रोधी को कुछ भी नहीं देना है और क्षमा धन मुझे मेरे पास ही रखना है ।
- (६२) अज्ञानी क्रोध करके विष पीता है पर तू क्यों विष पीता है ? और नरकगामी बनता है ।
- (६३) मेरे अशुभ कर्म काटने का यह साधन है ।
- (६४) क्रोध का विजय नहीं किया तो ज्ञान किस काम का ?
- (६५) चन्दन काटने वाले को और कुल्हाड़ी को सुगन्ध देता है तो मुझे क्या (क्रोधी को)

देना चाहिये ?

(६६) अपना अधिकार करके भी कोधी मुझे सुधारने की कोशिश करते हैं उनका उपकार मैं कैसे भूल सकता हूँ, उपकार न मानना नीचता है ।

(६७) मुझे असाध्य का उदय न होना वो वह मुझ पर क्रोध क्यों करता ? उसका कुछ रोष नहीं है रोष कबल मरी ही कर्म मज्जति का है । क्रोध कराने से नये कर्म बँधते हैं जमा रखने से नये कर्म नहीं बँधते और पुराने कर्म चप होठे हैं वो मैं ऐसा काम क्यों छोड़ूँ ? शत्रुओं का बदर के समान हैं उन्हें काम पित्ररे में कैद कर आत्म साधना कीजियेगा । धाण देकर भी काम की रक्षा करो ।

अध्यात्म पद

- (१) पुद्गल की सगति से जीव के भव भ्रमण बढ़ते हैं ।
- (२) संसार रूप नृत्यशाला में विषयी-कषायी नृत्य करते हैं । (अनन्त काल से) ।
- (३) ज्ञान ज्योति की विलीनता ही भाव निद्रा है ।
- (४) चैतन्य सत्ता की उल्लीनता ही मोक्ष मार्ग है ।
- (५) आत्मध्यान विना सब ध्यान भयकर हैं ।
- (६) स्वस्वरूप में लीन रहने वाला ही स्वाधीन है शेष सब पराधीन हैं और अनन्त संसारी हैं ।
- (७) आत्म रमणता यही जीवन मुक्त दशा है ।
- (८) ज्ञान दर्शन का सार चारित्र और चारित्र का सार निर्वाण और यही आत्मस्वभाव है ।
- (९) छोटी उम्र वाला व्यवहार में बाल है पर

(२१०)

अज्ञानी युवक व युव निरन्तर में महा लज्ज है ।

(१) रोग के समय कड़वी दवाएँ पीने में शिष्ट
प्रकार कहासीमता रखो है कही प्रकार कान-
पान में ज्ञानी सदैव कहासीम रखते हैं ।

(११) अज्ञानी जिसमें कर्म कोहों पचों में डूब करते
हैं । करने ही कर्म ज्ञानी अल्पहु हर्ष में डूब
करते हैं ।

(१२) ज्ञानी बल्येक दवाओरवास में व्यागृह है ।

(१३) अहर्निष परार्थ से शरीर बन्ध है वो ऐसे शरीर
में सुन्दरता कहाँ से आयायी ?

(१४) १ मास में गर्भस्थ जीव खून व पचाही बी-
बाता रहता है ।

२ मास में पानी के बुदबुदे जीव आकर
बाता होता है ।

३. मास में बुढ़बुढ़ा कठिन होता है ।

४. मास में मास की आकृति बनती है ।

५. मास में मास में से ५ अक्षर फूटते हैं
१ सिर, २ हाथ, २ पाव ।

६ मास में आँख, कान, नासिका, ओष्ठ,
अंगुलियों बनती हैं ।

७. मास में चमड़ी नख और केस आते हैं ।

८ मास में हलन चलन की क्रिया प्रारम्भ
होती है ।

९. मास में बाहर आने के योग्य बनता है ।

(१५) माता की विष्टा चाहे कच्ची हो या पक्की वहीं
जीव का निवास स्थान है ।

(१६) खाया हुआ भोजन कच्ची विष्टा है और
पाचन हुए बाद पक्की विष्टा है ।

(२२३)

(२१) 'अमृत विष के योग से विष घनता है । उसी प्रकार विषय कषाय से ज्ञानी भी अज्ञानी बनते हैं ।

(२२) आत्मा के लिये विषय कषाय कुपण्य भोजन है ।

(२३) मुर्दे को पत्ती नोचते हैं, उसी प्रकार अज्ञानी मुर्दे को विषय कषाय रूप पत्ती नोच २ कर खा जाते हैं ।

(२४) मुर्दे के हाथ में हथियार व्यर्थ है, उसी प्रकार ज्ञानी ज्ञान का उपयोग न ले तो वह ज्ञान निरर्थक है ।

(२५) गधे को चन्दन भार रूप है, वैसे ही चारित्र्य हीन की ज्ञान की बाँटें भार के समान हैं ।

(२६) विषय कषाय ज्ञान और दर्शन के दोनों चक्र फोड़ कर अन्धा बनाती है ।

(११४)

(१०) विषयी-कषायी का जीवन सुगम होना है ।

(१८) पूर्व जन्म की अज्ञानता से कभी हुए पापों के सिद्ध परभावों को छोड़ और वर्तमान जीवन को सुधारें ।

(२६) शारीरिक मज्जा में समस्त सर्व प्राप्त गता है, वह ज्ञान को नष्ट कर अज्ञान विष फैलाता है ।

(३) यद्यपि हमी आग से यह शारीरिक मज्जा नष्ट रहता है तो फिर ऐसे मज्जा में कौन वास करना सम्भव करते हैं और कौन ऐसे शरीर से जाह रमते हैं ।

(३१) परिग्रह व महत्वाकांक्षा की इच्छा होने से आरम्भ विषय कषाय व पाप की इच्छा होती है ।

(३२) आत्मा ही मात्रा विद्या पुत्र बन्धु, मित्र व

(२२५)

स्नेही है आत्मा के सिवाय सब दूसरे हैं ।

(३३) समस्त कषाय का नाश ही शुद्ध भाव है ।

(३४) जैसे बिज्ली चूहे खाने में पाप नहीं मानती
उसी प्रकार अज्ञानी आरम्भ परिग्रह विषय
और कषाय में पाप नहीं मानते ।

(३५) जैसे एक चूहे के पीछे कई बिजलियाँ दौड़ती हैं
उसी प्रकार एक आत्मा को सताने के लिए
अनेक विषय कषायी कर्म लगे रहते हैं । संयमी
व ज्ञानी अपनी रक्षा कर सकते हैं ।

(३६) अज्ञानी का एक क्षण भर भी ऐसा नहीं है
जिस समय वह विषय-कषाय व कर्म न बाध
रहा हो । समय २ पर वह सात या आठ कर्म
उपार्जन कर रहा है और भारी हो रहा है ।

(३७) ससार में सुख है ही नहीं । लुधा, तृषादि

(२२७)

कषाय य अशुभ लेश्या में जीवन पूर्ण करता है
उसकी क्या गति होगी ? मर्त्य विचारिण्य ।

(४२) स्थावर जीवों में अल्प शक्ति होने पर भी
चारित्र मोह के कारण अनन्त कषाय हैं तो लो
रात दिन आरम्भी, परिमर्ही, विषयी, कषायी
जीवन बिता रहे हैं उन मनुष्यों की कौनसी
गति होगी ?

(४३) तस काय की स्थिति पत्थर के आकाश में
अधर रहने जितनी है और स्थावर काय की
स्थिति पत्थर के जमीन पर रहने जितनी है ।
पाठक इस पर खूब ही मनन करें ।

(४४) नारकी के जीवों में परस्पर शत्रु बुद्धि है अगर
मित्र बुद्धि होतो दुःख कम हो उसी प्रकार
अज्ञानी ने पापोदय से धर्म क्रियाओं से शत्रुओं

(२१८)

मान रखनी जिससे दुःखी हो रहा है ।

(४५) विश्वामित्राजी भरकर भरक में अन्न है वहाँ
सिर्फ मनु एक वेद है और यह बोधि में अन्न
है तो वहाँ कल्पवृक्ष काट दी जाती है जैसे
वेद बोधे जाति ।

(४६) मनुष्य माता के एक मूत्रदि त्वान में जन्म
लेता है विश्व के किये का जगत् की दुःख रहा
मिलती है किन्तु गर्भस्थ जीव के किये न रहा
है न मकरा ।

(४७) ५ वाक की मंदरा ही सदा सुख और वीर्य
ही अमृत दुःख और संसार बर्षक है ।

(४८) शरीर के किये सोमक अस्त्रीम, संज्ञित पातक
जैसे ही आत्मा के किये दिष्ट विश्व पातक
हैं ।

(४६) पत्थर से मनुष्य अपना सिर फोड़े तो उसमें पत्थर का क्या दोष है ? उसी प्रकार जीव विषय कषाय में फँसे तो उसमें विषय कषाय का क्या दोष है जैसे पत्थर निर्दोष है उसी प्रकार विषय कषायी संयोग भी निर्दोष है ।

(५०) अज्ञानी को ससुराल की गालियाँ मीठी लगती हैं और माता पिता की हित शिक्षा कटु लगती है उसी प्रकार जीव धर्मारामन में दुःख मानता है और विषय कषायी पापी प्रवृत्ति में सुख मान रहा है ।

(५१) पशु, पक्षियों को सम्मान साता नहीं देते हैं तदपि वे उनके लिये मिथ्या मोह रखते हैं उसी प्रकार मानव भी मिथ्या मोह रखता है ।

(५२) सती स्त्री प्राण जाने पर भी पर पुरुष की

इच्छा नहीं करती बल्कि प्रकृत ज्ञानी विषय
रूपाय में नहीं रहते, और आत्म रमणता
करते हैं ।

(५३) आत्म प्राप्तिक सब कृत्य आत्म स्वमिच्छा हैं ।

(५४) लेख बली व बर्तन के योग से दीपक जलता
है वसी प्रकृत ज्ञान वरीम व चारित्र के योग से
आत्मा प्र शुद्ध स्वकर्म प्रकट होता है ।

(५५) अन्धे के हाथ में दिवा होने पर भी बड़े कुम
नहीं समझता वसी प्रकृत ज्ञानी को ज्ञान
जितने शतक व पण्डित समाज बताये चाहे वो
भी उस पर कुछ असर नहीं होता ।

(५६) मविष्कति इति मन्त्र जिसमें सम्बद्ध ज्ञान,
वरीम व चारित्र कल्पित होने की सत्य है वह
अस्य है । और जिसमें इच्छा अभाव है वह

अभठय

- (५७) आँख के बिना शरीर निरर्थक उसी प्रकार धर्म बिना मानव जन्म निरर्थक है ।
- (५८) ज्ञान दर्शन का जिसमें गुण न हो वह अजीव सा ।
- (५९) आठ कर्मों की मार से आत्मा मूर्च्छित हो रही है ।
- (६०) मोहनीय कर्म हिताहित का बोध नहीं होने देता ।
- (६१) जीव की कर्म से मित्रता है जिससे दुष्ट मित्र अपना कर्तव्य बजाकर आत्मा को विशेष दुःखी बनाता है ।
- (६२) सज्जन शुभ राह पर ले जाते हैं पर दुर्जन दुष्ट मार्ग में जाते हैं उसी प्रकार अशुभ कर्म

अष्टम कार्य कराते हैं और छम कर्म छम कार्य
कराते हैं ।

(६३) आत्मा बीसा कर्म-बीज बोला है वही प्रकार
हसको फल मिलता है ।

(६४) आत्मा और कर्म के बीच में अष्टम भाव
सांख्य कर्मों को है वे अष्टम भाव ही आत्मा
और कर्म का संबन्ध करने हैं ।

(६५) शरीर में अष्ट कर्मों वाली ही आत्मा है ।

(६६) सुख दुःख का अष्टम भाव कर्म से होता है ।

(६७) जो कर्म छम कर्म का वह कर्म करके आत्म
मानती है वही प्रकार आत्मा ही बिना कर्म से
आत्म मानते हैं और भव भ्रमण करते हैं ।

(६८) जो कर्म को है कर्मों पर वैर रखते ही
कराया करता है और कदाचित् रहता है

(२३३)

उसी प्रकार समदृष्टि भोग को रोग समझ कर
उससे उदासीन रहते हैं ।

(६६) रोगी रोग मिटने पर रोग की इच्छा नहीं
करता उसी प्रकार समदृष्टि भोग की इच्छा
नहीं करते ।

(७०) रोगी रोग से मुक्त होने की भावना करता है
उसी प्रकार समदृष्टि भोग रूप रोग से मुक्त
होने की भावना करते हैं ।

(७१) हे भव्य आत्मा ! आप में राग द्वेष न रहे
ऐसी कृपा करें ! यही आत्मा का सच्चा धर्म है ।

(७२) मिथ्या दृष्टि भोग में इष्टानिष्ट बुद्धि रखते हैं
पर समदृष्टि समभाव रखते हैं ।

(७३) मिथ्यात्वी मृत्यु समय डरता है पर समदृष्टि
मृत्यु को महोत्सव मानता है और परम

अनभिज्ञ रहता है ।

(५४) मिथ्यात्वही शरीर व कुटुम्ब को अपना मानते हैं पर समदृष्टि आस्था ज्ञान दर्शन चरित्र और तपस्वि को अपना मानती है ।

(५५) स्व गुह्य व पर की कथना वही मिथ्या दृष्टि का लक्षण है । हर समदृष्टि स्व कथना व पर की गुह्यता करने में ही आनन्द मानते हैं ।

(५६) समदृष्टि सब जीवों को कर्माधीन समझकर एगोत्रेय न करते समभाव रखते हैं ।

(५७) चरित्र के बीसे गुण समदृष्टि में रहते हैं ।

(५८) अनन्त संसारी के गुण मिथ्यात्वही में होते हैं ।

(५९) रसयुक्त अपने वाक्ते को पञ्च पञ्चने की अहंरत रहती है वही पञ्चर क्षात्री को चरित्र की अहंरत है पञ्च रहित रसयुक्त लाभदायक

नहीं है उसी प्रकार चारित्र रहित ज्ञान विशेष लाभदायक नहीं है ।

(८०) शीतलता दूर करने के लिये अग्नि में गिरने वाला दुःखी होता है उसी प्रकार मिथ्यात्वी त्रिषयेच्छा से भोग भोगने वाला इस लोक व परलोक में दुःखी होता है । (अनन्त काल तक)

(८१) दीपक में प्रकाश रहता है, उसी प्रकार समष्टि ज्ञान दीपक से सदा प्रकाशित है ।

(८२) चोर को जिस प्रकार सिपाही मारते हैं उसी प्रकार वेदनीय कर्मरूप सिपाही भी विषयी कषायी को अनन्तकाल से मार मारते हैं ।

(८३) सिपाही मार २ कर थक जाते हैं तब चोर को शांति मिलती है उसी प्रकार वेदनीय कर्म सजा देकर के थक जाते हैं । तब आत्मा को शान्ति

(८६) अज्ञानी ज्ञानी से द्वेष करते हैं ।

(६०) डबलू सूर्य से द्वेष करके अन्धकार को पसन्द करता है । उसी प्रकार अज्ञानी मिथ्यात्व से खुश रहते हैं ।

(६१) कालरूप मणिधर के मुँह में तमाम विश्व का समावेश है । भारत में नित्य ४०,००० मनुष्य मरते हैं ।

(६२) इन्द्रिय रूपी पिशाच आत्मा की घात करता है । आत्म रमणता ही सच्चा सुख है ।

(६३) जैसे शराबी अपने शरीर को भूल जाता है वैसे अज्ञानता के नशे में आत्मा खुद को भूल गया है, आत्मा सो परमात्मा ।

(६४) सम्यक् प्रयत्न के अभाव में परमात्मा के स्थान पर पत्थर घनता है स्थावर तीव्र योनि में

(२३८)

अमृत का वह दुःख भोगता है आत्मदान
ही सब सुखों का मूल है । मैं कौन ? कहीं से
क्या ? कहीं क्या रहा हूँ ? इस का भी भिखारी
हाम नहीं है उससे क्या भजामी कौन है ?



(२३६)

॥ संचित चौबीस तीर्थकरों का वर्णन ॥

आध्यात्मिक विकास के ऊँचे शिखर पर पहुँचाने वाले महापुरुषों को जैन-धर्म में तीर्थकर कहा जाता है। तीर्थकर देव राग, द्वेष, भय, शोक, क्रोध, मान, माया, लोभ, मोह, चिन्ता आदि विकारों से सर्वथा रहित होते हैं। केवल ज्ञान और केवल दर्शन के धारक होते हैं।

सभी दुर्गुणादि दोषों से रहित, उत्तमोत्तम गुणालंकृत को तीर्थकर देवाधिदेव कहते हैं।

जैन तीर्थंकर

तीर्थंकर कौन होते हैं ?

तीर्थंकर जैन साहित्य का एक मुख्य पारिव्यापिक शब्द है। यह शब्द कितना पुराना है इस के लिए इतिहास के फेर में पड़ने की जरूरत नहीं। आजकल का विश्ववित्त से विश्ववित्त इतिहास भी इसका ज़ारंग काह या सफ़र में अग्रगण्य है और एक बहार से तो यह कहना चाहिए कि यह शब्द अग्रगण्य इतिहास समझी से है भी बहुत दूर परे की चीज़।

जैन धर्म के साथ यह शब्द का अजित सम्बन्ध है। दोनों को दो अलग अलग तानों में विभक्त करना मानों दोनों के वास्तविक स्वरूप को ही विकृत कर दिया है। जैनो की देख देखी यह शब्द अन्य पन्थों में भी कुछ-कुछ आजीव काह में व्यवहृत हुआ है;

१ देखी देखी साहित्य का संकायता यह।

परन्तु वह सब नहीं के बराबर है। जैनों की तरह उनके यहाँ यह एक मात्र शब्द एव उनका अपना निजी शब्द बन कर नहीं रह सका।

हाँ तो जैन धर्म में यह शब्द किस अर्थ में व्यवहृत हुआ है, और इसका क्या महत्त्व है ? यह देख लेने की बात है। तीर्थंकर का शाब्दिक अर्थ होता है—तीर्थ का कर्ता-निर्माता-बनाने वाला। 'तीर्थ' शब्द का जैन परिभाषा के अनुसार मुख्य अर्थ है—धर्म। ससार समुद्र से आत्मा को तारने वाला एक मात्र अहिंसा एव सत्य आदि धर्म ही हैं, अतः धर्म को तीर्थ कहना, शब्द शास्त्र की दृष्टि से भी उपयुक्त ही है। तीर्थंकर अपने समय में ससार सागर से पार करने वाले धर्मतीर्थ की स्थापना करते हैं, उद्धार करते हैं, अतः वे तीर्थंकर कहलाते हैं। धर्म

के आधार पर करने वाले साधु, साध्वी आश्रम = गुरुत्व
 पुरुष और साधिका = गुरुत्व की रूप चतुर्विध संघ
 को भी गोप्य दृष्टि से तीर्थ कहा जाता है। अब
 चतुर्विध धर्म संघ की स्थापना करने वाले महापुरुषों
 को तीर्थकर कहते हैं।

जैन-धर्म की मांगना है कि—जब जब संसार में
 अत्याचार का उदय होता है तथा दुष्टचारों से
 जल्मीकित हो जाती है लोगों में ऐसी नार्थिक भावना
 फैल होकर आसुरी पाप भावना और बकड़ होती है
 तब तब संसार में तीर्थकरों का अवतार होता है।
 और वे संसार की मल माया का परित्याग कर, त्याग
 और वैराग्य की अलंकार पूर्ण होकर, अनेकानेक
 मयंकर कह कहकर पहले स्वयं स्वयं की पूर्ण ज्ञोति
 का दर्शन करते हैं—जैन परियाया के अनुष्ठान के द्वारा

(२४३)

ज्ञान प्राप्त करते हैं, और फिर मानव संसार को धर्मोपदेश देकर असत्य-प्रपंच के चंगुल से छुड़ाते हैं, सत्य के पथ पर लगाते हैं, और संसार में पूर्ण सुख शान्ति का साम्रज्य स्थापित करते हैं । तीर्थंकरों के शासन काल में प्रायः प्रत्येक भव्य स्त्री पुरुष अपने आप को पहचान लेता है, और 'स्वयं सुख पूर्वक जीना, दूसरों को सुख पूर्वक जीने देना, तथा दूसरों को सुख पूर्वक जीते रहने के लिए अपने सुखों की कुछ भी परवाह न करके अधिक से अधिक सहायता देना'—उक्त महान सिद्धान्त को अपने जीवन में उतार लेता है । अस्तु, तीर्थंकर वह, जो संसार को सच्चे धर्म का उपदेश देता है, संसार को उस के नाश करने वाली बुराइयों से बचाता है, संसार को भौतिक सुखों की लालसा से हटा कर अभ्यात्म सुखों

(२४५)

जन्म जात शत्रु प्राणी भी द्वेष भाव को छोड़ कर बड़े प्रेम भरे भ्रातृ भाव के साथ पूर्ण शान्त अवस्था में रहते हैं। द्वेष और द्रोह क्या चीज होते हैं, इसका उनके हृदय में भान ही नहीं रहता। क्या मनुष्य, क्या पशु सभी पर अखंड शान्ति का साम्राज्य छाया रहता है। उनकी ज्ञान शक्ति अनन्त होती है। समस्त चराचर विश्व का उन्हें हस्तामलक के समान पूर्ण प्रत्यक्ष ज्ञान होता है। विश्व का कोई भी रहस्य ऐसा नहीं रहता, जो कि उनके ज्ञान में न देखा जाता हो।

जैनधर्म में मानव जीवन की दुर्बलता के अर्थात् मनुष्य की अपूर्णता के सूचक अठारह दोष माने गए हैं।

१—मिथ्यात्व=असत्य विश्वास, २—अज्ञान,

३—कोष, ४—मान, ५—माया—कपट, ६—भोम,
 ७—एति = सुन्दर वस्तु के मिलने पर हर्ष, ८—अएति
 = असुन्दर वस्तु के मिलने पर रोद, ९—विश्रा,
 १०—शोक, ११—अखीड—मूठ १२—चोर्ब—
 चोरी १३—मत्सर—झाड़, १४—भय १५—द्विष,
 १६—उग—आसक्ति, १७—झीडा—कोई तमाशा
 मय रंग १८—हास्य—हँसी मजाक । (कुछ प्रश्नों
 में अट्ठारह दोष दूसरे रूप में भी माने गए हैं ।)

जब तक मनुष्य इन अट्ठारह दोषों से सर्वथा
 मुक्त नहीं होता तब तक वह आप्यात्मिक शुद्धि के
 पूर्ण विचारा के पद पर नहीं पहुँच सकता । ज्यों ही
 वह अट्ठारह दोषों से मुक्त होता है, त्यों ही आप्त
 शुद्धि के महान् द्वेषे शिखर पर पहुँच जाता है और
 कबल राज कंपक रीति के द्वारा समस्त विषय का

ज्ञाता द्रष्टा बन जाता है। तीर्थंकर भगवान् भी अद्वारह दोषों से सर्वथा रहित होते हैं। एक भी दोष अणुमात्र अंश में भी उनमें नहीं होता।

तीर्थंकर ईश्वरीय अवतार नहीं हैं

अजैन संसार जैन तीर्थंकरों के प्रति बहुत कुछ आन्त धारणाएँ रखता है। खेद है कि—इतिहास सम्बद्ध लाखों वर्षों से अजैन-संसार का जैन-संसार के साथ निकट सम्बन्ध चला आ रहा है, फिर भी उसने निष्पक्षपात दृष्टि से कभी सत्य को परखने की चेष्टा न की।

कुछ लोग कहते हैं कि—जैनी अपने तीर्थंकरों को ईश्वर का अवतार मानते हैं। मैं उन बन्धुओं से कहूँगा कि वे भूल में हैं। जैन धर्म ईश्वरवादी नहीं है। वह किसी एक संसार का कर्ता, धर्ता, संहर्ता

(२४८)

ईश्वर को नहीं मानता। उसकी यह मान्यता थी है कि हजार मुन्हाओं कात्त हुआ कौन नारा करने राजा भक्तों का पातक करने याता सर्वथा परोक्ष, कोई एक ईश्वर है; और यह तथा समस्त ब्रह्म संसार पर दया-भाव लाकर गो-छोक छत्त-छोक का बैकुण्ठ धाम कर्त्ति से बोका हुआ संसार में जाता है किन्ती के यहाँ जन्म लेता है और फिर बीजा दिनाकर बापिन लोट जाता है। जबका कहीं कहीं है वहीं बैठा हुआ ही संसार पत्रिका को सूझ फेर देता है और मन चाहता सा बजा देता है अर्थात् कर दिनाका है।

बैतपमें मैं समुध्य से बढ़कर और कोई दूसरा सम्प्रदाय प्राणी नहीं है। बैत सम्प्रदाय में जात कहीं कहीं भी देखेंगे समुध्यों को सम्बोधन करते हुए

(२४६)

‘देवाणुप्पिय’ शब्द का प्रयोग हुआ पायेंगे। उक्त सम्बोधन का यह भावार्थ है कि ‘देव-संसार भी मनुष्य के आगे तुच्छ है। वह भी मनुष्य के प्रति प्रेम, श्रद्धा एवं आदर का भाव रखता है। मनुष्य अगाध अनन्त शक्तियों का प्रभवस्थान है। वह दूसरे शब्दों में स्वयं सिद्ध ईश्वर है, परन्तु संसार की मोहमाया के कारण कर्म मल से आच्छादित है, अतः बादलों से ढका हुआ सूर्य है, कुछ भी प्रकाश नहीं फैक सकता।

परन्तु व्यों ही वह अपने होश में आता है, अपने वास्तविक स्वरूप को पहचानता है, दुर्गुणों को त्याग कर सद्गुणों को अपनाता है; तो धीरे धीरे निर्मल शुद्ध एवं स्वच्छ होता चला जाता है, और एक दिन जगमगाती हुई शक्तियों का पुञ्ज बन

कर मामुक्तता के पूर्ण विकास की कोख पर पहुँच कर सर्वज्ञ, सर्वेश्वरी, ईश्वर, परमात्मा हुए, हुए बन जाया है । तदनुस्मरण जीवन्मुक्त दशा में संसार को सत्य का प्रकाश देता है और जन्म में निर्वास पाकर मोह-बरा में सदा काल के लिए अमर, अमर अविनाशी-औन-परिभाषा में सिद्ध होजाया है ।

अस्तु तीर्थंकर भी यत्तुल्य ही होते हैं, वे कोई अजीब ऐसी सृष्टि के मायी ईश्वर के अवतार या ईश्वर के अंश बरा कुछ नहीं होते । एक दिन वे भी हमारी मुन्हाटी तरह ही वासन्धियों के गुह्यम में आपमग्न हो क्षिप्त हो संसार के दुःख शोक व्याधि व्याधि से संव्रस्त ब । सत्य क्या है असत्य क्या है—यह उन्हें कुछ भी पता नहीं था । इन्द्रिय मुक्त ही एकमात्र ज्ञेय था और उन्ही कल्पन के पीछे

अनादि काल से नाना प्रकार के क्लेश उठाते, जन्म मरण के संक्रावात में चक्कर खाते घूम रहे थे । परन्तु अपूर्व पुण्योदय से सत्पुरुषों का संग मित्रा, चैतन्य और जड़ का भेद समझा, भौतिक एवं आध्यात्मिक सुख का महान् अन्तर ध्यान में आया, फलतः झटपट ससार की वासनाओं से मुँह मोड़कर सत्य पथ के पथिक बन गए, आत्म-सयम की साधना में लगातार अनेक जन्म बिताए और अन्त में एक दिन वह मनुष्य-भव प्राप्त किया कि उस में महान् तीर्थंकर के रूप में प्रगट हो गए । उस जन्म में भी यह नहीं कि किसी राजा महाराजा के यहाँ जन्म लिया और वयस्क होने पर भोग विलास करते हुए ही तीर्थंकर हो गए । सब कुछ राज्य वैभव छोड़ना होता है, पूर्ण अहिंसा, पूर्ण सत्य, पूर्ण अस्तेय, पूर्ण

महाचर्य और पूर्ण सन्तोष की साधना में निरन्तर जुटा रहना होता है, पूर्ण स्वाधीनता प्राप्त करने के निश्चय के साथ ही अपने-अपने स्थानों में अत्यन्त ध्यान करना होता है, अनेक प्रकार के आध्यात्मिक, आधिभौतिक एवं आध्यात्मिक पुण्यों का पूर्ण श्रम और साधना कर मनुष्यसंसार में भी अन्तर्द्वेष से रहित रह कर शीघ्र ही मृत्यु प्राप्त होता है। तब कहीं पापमय से मुक्ति होने पर कल्याण-ज्ञान और केवल ईश्वर की प्राप्ति के द्वारा तीर्थंकर पर प्राप्त होता है।

तीर्थंकरों का पुनरागमन नहीं

मैं एक जैन मित्र हूँ और मैंने सब ओर प्रयत्न कर उपदेश देना मेरा कर्तव्य है। अतः बहुत से स्थानों में अनेक मनुष्यों द्वारा यह शंका उत्पन्न हुई है कि जैनो में २४ ईश्वर या देव हैं जो प्रत्येक

(२५३)

कालचक्र में घारी-बारी से जन्म लेते हैं और धर्मो-पदेश देकर पुनः अन्तर्धान हो जाते हैं ।' इस शका का समाधान कुछ तो पहले ही कर दिया गया है । फिर भी स्पष्ट शब्दों में यह बात बतला देना चाहता हूँ कि—जैन धर्म में ऐसा अवतारवाद नहीं माना गया है । अवतल तो अवतार शब्द ही जैन-परिभाषा का नहीं है । यह एक वैदिक परम्परा का शब्द है, जो उसकी मान्यता के अनुसार विष्णु के बार-बार जन्म लेने के रूप में राम, कृष्ण आदि सत्पुरुषों के लिए आया है । आगे चलकर यह मात्र महापुरुष का द्योतक रह गया और इसी कारण आजकल के जैन बन्धु भी किसी के पूछने पर मूटपट अपने यहाँ २४ अवतार बता देते हैं एवं तीर्थंकरों को अवतार कह देते हैं । परन्तु इसके पीछे किसी एक व्यक्ति द्वारा

बार-बार जन्म लेने की भावित भी बड़ी भारी है जिसको छोड़कर अबोध जनता में वह विरवास फैल गया कि ९४ तीर्थंकर जैसे हुए हैं और वे ही बार-बार जन्म लेते हैं संसार का उद्धार करते हैं और फिर अपने स्वान में जा बिछड़ते हैं।

बौद्धधर्म में मोक्ष में जाने के बाद संसार में पुनरागमन नहीं माना जाता। विरह का प्रत्येक निबन्ध कार्य-कारण के रूप में सम्भव है। बिना कारण के कभी कार्य नहीं हो सकता। बीज होगा तभी अंकुर हो सकता है। भाग्य होगा तभी बल हो सकता है। अस्तु आवागमन का जन्म-मरण पाने का कारण कर्म है और वे मोक्ष अवस्था में रहते नहीं। अतः कोई भी निवारणार्थी सज्जन समझ सकता है कि—जो आत्मा कर्म-मल से मुक्त होकर मोक्ष का

(२५५)

चुका, वह फिर संसार में कैसे आ सकता है ? बीज तभी तक उत्पन्न हो सकता है, जब तक कि वह भुना नहीं है, निर्जीव नहीं हुआ है । जब बीज एक बार भुन गया, तो फिर कभी तीन काल में भी उत्पन्न नहीं हो सकता । जन्म-मरण अंकुर का बीज कर्म है, उसे तपश्चरण आदि धर्म-क्रियाओं से जला दिया, तो बस फिर सदा काल के लिए अजर अमर । एक प्राचीन जैन आचार्य ने इस सम्बन्ध में क्या ही अच्छा कहा है—

दग्धे बीजे यथाऽत्यन्त,
 प्रादुर्भवति नाकुरः ।
 कर्म-बीजे तथा दग्धे,
 न रोहति भवाकुरः ॥

बहुत दूर चला आया हूँ, परन्तु विषय को स्पष्ट

(२५७)

होती हैं। जैनधर्म किसी एक व्यक्ति, जाति या समाज के पीछे ही मुक्ति का ठेका नहीं रखता। उसकी उदार दृष्टि में तो हर कोई मनुष्य—चाहे वह किसी भी देश, जाति, समाज या धर्म का हो, जो अपने आप को बुराईयों से बचाता है, आत्मा को अहिंसा, क्षमा, सत्य, शील आदि मद्गुणों से पवित्र बनाता है, वह मुक्त हो सकता है।

तीर्थंकरों में और अन्य मुक्त होने वाले महा-पुरुषों में आन्तरिक शक्तियों की वास्तव कोई भेद नहीं है। केवल-ज्ञान, केवल-दर्शन आदि आत्मिक शक्तियाँ सभी मुक्त होने वालों में एक-सा होती हैं। जो कुछ भेद है, वह धर्म-प्रचार की मौलिक दृष्टि का और अन्य योग सम्बन्धी अद्भुत शक्तियों का। तीर्थंकर महान् धर्म-प्रचारक होते हैं, वे अपने अद्वि-

इतने विशाल स्वामी ही । साधारण मुक्त पुरुष अपना लक्ष्य अवश्य प्राप्त कर लेते हैं, परन्तु जनता पर अपना चिरस्थायी एवं अनुष्ण प्रभुत्व नहीं बैठा पाते । यही भेद है, जो तीर्थंकर और अन्य मुक्त पुरुषों में अन्तर डालता है ।

प्रस्तुत विषय के साथ लगती हुई यह बात भी स्पष्ट किये देता हूँ कि यह भेद मात्र जीवन्मुक्त दशा में अर्थात् देहधारी अवस्था में ही है । मोक्ष में पहुँच जाने के बाद कोई भी भेद-भाव नहीं रहता । वहाँ तीर्थंकर और अन्य मुक्त पुरुष सभी एक ही स्वरूप में रहते हैं । क्यों कि जब तक जीवात्मा जीवन्मुक्त दशा में रहता है, तब तक तो प्रारब्ध-कर्म भोगने बाकी रहते हैं, अतः उनके कारण जीवन में भेद रहता है । परन्तु देहमुक्त दशा में, मोक्ष में तो कोई

(२६१)

समवशरण (धर्मसभा) में अहिंसा का अखंड राज्य होता है । सिंह और मृग आदि परस्पर विरोधी भी एक साथ प्रेम से बैठे रहते हैं । न सिंह में मारक वृत्ति रहती है और न मृग में भय-वृत्ति । अहिंसा के देवता के सामने हिंसा का अस्तित्व भला कैसे रह सकता है ?

ऊपर कुछ बातें असम्भव जैसी मालूम होती हैं; परन्तु आध्यात्मिक योग के सामने ये कुछ भी असम्भव नहीं हैं । आजकल भौतिक विद्या के चमत्कार ही कुछ कम आश्चर्यजनक नहीं हैं, तब आध्यात्मिक विद्या के चमत्कारों का तो कहना ही क्या ? आज के साधारण योगी भी कभी-कभी अपने चमत्कारों से मानव-बुद्धि को हतप्रभ कर देते हैं, तो फिर तीर्थंकर देव तो योगिराज हैं । उनके

हित हुए । बाद में राज्य-त्याग कर दीक्षा ग्रहण की और कैवल्य पाया । आपका जन्म चैत्र कृष्णा अष्टमी को और निर्वाण=मोक्ष माघ कृष्णा त्रयोदशी को हुआ । आप की निर्वाण-भूमि कैलाश पर्वत है । ऋग्वेद, विष्णु पुराण, अग्नि पुराण, भागवत आदि जैनेतर वैदिक साहित्य में भी आपका गुण कीर्तन किया गया है ।

(२) भगवान् अजितनाथजी दूसरे तीर्थंकर थे । आपका जन्म अयोध्या नगरी के इक्ष्वाकुवंशीय क्षत्रिय सम्राट् जितशत्रु राजा के यहाँ हुआ । आपकी माता का नाम विजयादेवी था । भारतवर्ष के दूसरे चक्रवर्ती सम्राट् आपके चचा सुमित्रविजय के पुत्र थे । आपका जन्म माघ शुक्ला अष्टमी को और निर्वाण चैत्र शुक्ला पंचमी को हुआ । आपकी निर्वाण-भूमि

सम्मेदशिक्षर है, जो व्याज-ऊँच बंगाल में करसना पहाड़ के नाम से प्रसिद्ध है।

(१) भगवान् संभवनाथजी तीसरे तीर्थंकर के आपका जन्म जाबली नगरी में हुआ। आपके पिता का नाम हरदासुर्बशीय महापद्म शिवारि और माता का नाम सेमा देवी था। आपने पूर्ण जन्म में विपुल-बाहुन राज्य के रूप में अक्षयवत्त राजा का राज्य किया था और अपना सब दोष क्षमों के द्विर्द्वार हुआ दिया था। आपका जन्म मार्गशीर्ष शुक्ल चतुर्थी को और निर्वाण वैशाख शुक्ल पंचमी को हुआ। आप की निर्वाण-भूमि भी सम्मेदशिक्षर है।

(४) भगवान् अमिनन्दनराजजी चौथे तीर्थंकर थे। आपका जन्म अशोक नगरी के हरदासुर्बशीय राजा संवर के पार्श्व हुआ। आपकी माता का नाम

सिद्धार्था था । आपका जन्म माघ शुक्ला द्वितीया को और निर्वाण वैशाख शुक्ला अष्टमी को हुआ । आपकी निर्वाण-भूमि सम्मेदशिखर है ।

(५) भगवान् सुमतिनाथ पाँचवें तीर्थंकर थे । आपका जन्म अयोध्या नगरी (कौशलपुरी) में हुआ । आपके पिता महाराजा मेघरथ और माता सुमगला देवी थीं । आपका जन्म वैशाख शुक्ला अष्टमी को और निर्वाण चैत्र शुक्ला नवमी को हुआ । आपकी निर्वाण भूमि भी सम्मेदशिखर है । आप जब गर्भ में आये, तब आपकी माता की बुद्धि बहुत स्वच्छ और तीव्र हो गई थी, अतः आपका नाम सुमतिनाथ रक्खा गया ।

(६) भगवान् पद्मप्रभ छठे तीर्थंकर थे । आपका जन्म कौशाम्बी नगरी के राजा भीधर के यहाँ हुआ ।

माता का नाम सुसोमा वा । जन्म कथितं कृष्ण
 द्वादशी को और निर्वाण मार्गेश्वर कृष्ण पञ्चदशी
 को हुआ । आपकी निर्वाण-भूमि भी सम्प्रेक्षित है ।

(७) भगवान् सुपारबेलाव छाठवें तीर्थकर थे ।
 आपकी जन्म-भूमि काशी (बनारस) पिता प्रसिद्धवेन
 राजा और माता पुष्पी । आपका जन्म क्लेश दुष्टका
 द्वादशी को और निर्वाण भाद्रपद कृष्ण सप्तमी को
 हुआ । निर्वाण-भूमि सम्प्रेक्षित है ।

(८) भगवान् चन्द्रप्रभ छाठवें तीर्थकर थे ।
 आपकी जन्मभूमि चन्द्रपुरी बगरी, पिता महासेन
 राजा और माता लक्ष्मिका । आपका जन्म वीर दुष्टका
 द्वादशी को और निर्वाण भाद्रपद कृष्ण सप्तमी को
 हुआ । निर्वाण-भूमि सम्प्रेक्षित है ।

(९) भगवान् सुनिबिन्धवर्मा (पुष्करांत) नौवें तीर्थ

(२६७)

कर थे । आपकी जन्म-भूमि काकन्दी नगरी, पिता सुग्रीव राजा, माता रामादेवी । आपका जन्म मार्गशीर्ष कृष्ण पंचमी को और निर्वाण भाद्रपद शुक्ल नवमी को हुआ । निर्वाण-भूमि सम्मेदशिखर है ।

(१०) भगवान् शीतलनाथ दशवें तीर्थकर थे । आपकी जन्म भूमि भद्रिलपुर नगरी । पिता हृदरथ राजा और माता नन्दारानी । जन्म माघ कृष्ण द्वादशी को और निर्वाण वैशाख कृष्ण द्वितीया को हुआ । निर्वाण-भूमि सम्मेदशिखर ।

(११) भगवान् श्रेयासनाथजी ग्यारहवें तीर्थकर थे । आपकी जन्म-भूमि सिंहपुर नगरी, पिता विष्णुसेन राजा और माता विष्णुदेवी । आपका जन्म फाल्गुण कृष्ण द्वादशी को और निर्वाण श्रावण कृष्ण तृतीया को हुआ । निर्वाण-भूमि सम्मेद

(११८)

शिक्षर । मगवान् महावीर ने पूर्व जन्मों में त्रिपुड
बाहुर्दर के रूप में श्री भैरवोत्तमजी के चरणों में
करवेरा प्राप्त किया था ।

(१२) मगवान् बहुपुष्पजी कण्डर्वें तीर्थकर थे ।
आपकी कर्म-भूमि चम्पा नगरी, पिता बाहुपुष्प
एका और माता जयदेवी । आपका कर्म कस्तुर्य
कृष्ण बाहुर्दरी को और निर्वाण अथाह एक
बाहुर्दरी को हुआ । निर्वाण-भूमि चम्पा नगरी ।
आप बाह्म अष्टमारी रहे विवाह नहीं किया ।

(१३) मगवान् विमलनाथजी वेरह्वें तीर्थकर
थे । आपकी कर्मभूमि कम्पिनापुर नगरी, पिता
कण्डर्वें एका और माता रणमदेवी । कर्म आप
एक ही को और निर्वाण अथाह कृष्ण सप्तमी
को हुआ । निर्वाण-भूमि सम्भोदशिक्षर ।

(२६६)

(१४) भगवान् अनन्तनाथजी चौदहवें तीर्थंकर थे । आपकी जन्म-भूमि अयोध्या नगरी, पिता सिंह-सेन राजा और माता सुयशा । जन्म वैशाख कृष्ण तृतीया को और निर्वाण चैत्र शुक्ला पंचमी को हुआ । निर्वाण भूमि सम्मेद शिखर ।

(१५) भगवान् धर्मनाथजी पंद्रहवें तीर्थंकर थे । आपकी जन्म-भूमि रत्नपुर नामक नगरी, पिता भानुराजा और माता सुव्रता । जन्म माघ शुक्ला तृतीया को और निर्वाण ज्येष्ठ शुक्ला पंचमी को हुआ । निर्वाण-भूमि सम्मेदशिखर ।

(१६) भगवान् शान्तिनाथजी सोलहवें तीर्थंकर थे । आपका जन्म हस्तिनापुर के राजा विश्वसेन की अचिरा रानी से हुआ । जन्म ज्येष्ठ कृष्ण त्रयोदशी को और निर्वाण भी इसी तिथि को हुआ । निर्वाण-

(१७०)

भूमि सम्मोदशिवर । आप माछ के पंचम बरबर्ती
राजा भी थे । आप के जन्म होने पर देश में फैली
हुई मृगी रोग की महामारी शान्त हो गई । इसलिध
आपका नाम शान्तिनाथ रक्खा गया । आप बहुत ही
दयालु प्रकृति के थे । पहले जन्म में आपने कबूतर की
रक्षा के लिए बरसे में शिकारी को अपने शरीर का
मांस काट कर दे दिया था ।

(१७) भगवान् कुम्भनाथजी कवछमें तीर्थंकर
थे । आपका जन्म-स्थान हस्तिनापुर सिवा सूरराजा
माता भीदेवी । जन्म चैराज कुम्हा बनुपेयी का
और निर्वास चैराज कुम्हा प्रतिपदा (पञ्च) को
हुआ । निर्वास-भूमि सम्मोदशिवर । आप माछ के
छठे बरबर्ती राजा भी थे ।

(१८) भगवान् अरमावजी पठाणमें तीर्थंकर

थे । आप का जन्म-स्थान हस्तिनागपुर, पिता सुदर्शन राजा, और माता श्रीदेवी । आपका जन्म मार्गशीर्ष शुक्ला दशमी को और निर्वाण भी मार्गशीर्ष (मगसिर) शुक्ला दशमी को ही हुआ । निर्वाण-भूमि सम्मेदशिखर । आप भारत के सातवें चक्रवर्ती राजा भी हुए ।

(१६) भगवान् मल्लिनाथजी उन्नीसवें तीर्थंकर थे । आपका जन्म-स्थान मिथिला नगरी, पिता कुम्भराजा, और माता प्रभावतीदेवी । आपका जन्म मार्गशीर्ष शुक्ला द्वादशा को हुआ । निर्वाण भूमि सम्मेदशिखर है । आप वर्तमान कालके चौबीस तीर्थंकरों में स्त्री तीर्थंकर थे । आपने विवाह नहीं किया, आजन्म ब्रह्मचारी रहे । स्त्री होकर आपने बहुत व्यापक भ्रमण किया और धर्म-प्रचार किया । आपने चालीस हजार

(२७३)

(२२) भगवान् नेमिनाथजी बाईसवें तीर्थंकर थे । आपका दूसरा नाम अरिष्टनेमि भी था । आपकी जन्म-भूमि आगरा के पास शौरीपुर नगर, पिता यदुवश के राजा समुद्रविजयजी, और माता शिवादेवी- । जन्म श्रावण शुक्ला पंचमी को और निर्वाण आषाढ शुक्ला अष्टमी को हुआ । निर्वाण भूमि काठियावाड़ में गिर-नार पर्वत है, जिसे पुराने युग में रेवतगिरि भी कहते थे । भगवान् अरिष्टनेमिजी कर्मयोगी श्रीकृष्ण चन्द्रजी के ताऊ के पुत्र भाई थे । कृष्णजी ने आपसे ही धर्मोपदेश सुना था । आप बड़े ही कोमल-प्रकृति के महापुरुष थे । आपका विवाह सम्बन्ध महाराजा चप्रसेन की-सुपुत्री राजीमती से निश्चित हुआ था, किन्तु विवाह के अवसर पर बरातियों के भोजन के लिए पशु बध होता देख कर विरक्त हो मुनि-वन

गय, विवाह नहीं करुण ।

(२३) भगवान् पार्ष्णनाथजी तेईघरें तीर्थहर बे ।
 आपकी जन्म भूमि क्यही देश बजारत नगरी पिता
 अरखसेन एडा और माता बामादेवी । जन्म चौक
 कुच्छ दरामी और निर्बाण नाथय एच्छा अहरी ।
 निर्बाण-भूमि मन्मोद शिखर । आपने कमठ उपल्ली
 को नोय दिया बा और कसली घूरी में से बहते हुए
 मग्न तगरा की को बचाया बा ।

(२४) भगवान् महावीर चौबीसवें तीर्थहर बे ।
 आपकी जन्म भूमि बैरप्रणी (कश्मिर कुच्छ) पिता
 सिद्धार्थ एडा और माता त्रिशङ्कदेवी । जन्म चौक
 एच्छा नथोदरी और निर्बाण कार्विक कुच्छ पेरत ।
 निर्बाण-भूमि पाथापुरी । भगवान् महावीर बड़े ॥
 बरफुट रवागी पुण्य बे । पाछ नरें में सर्वत्र पीछे हर

(२७५)

हिंसामय यज्ञों का निषेध आपके ही द्वारा हुआ था ।
बौद्ध साहित्य में भी आपका उल्लेख आता है । बुद्ध
आपके समकालीन थे । आज-कल भगवान् महावीर
का ही शासन चल रहा है ।

(जैनत्व की भाँकी से उद्धृत)



२४ चौबीस ही तीर्थंकर क्यों होते हैं ?

मित्र-महानुभाव, प्रत्येक भाव चक्र के हिसाब से चतुर्विंशति तीर्थंकर ही हो सकते हैं यथा—

- १—श्री ऋषभदेवजी म० हुए १८ कोटा कोसी
सगर पीछे ।
- २— " अश्विठमावजी " २ सगर कोटसगर बाद हुए
- ३— संभवनाथजी ३ " " "
- ४— अमिर्तदन " " १ " " "
- ५— सुमति " " ६ " " "
- ६— " पद्म मसुजी , १० इन्दर " "
- ७— " सुगर्भनाथजी ६ " " "
- ८— " चन्द्रमसुजी " ३ पी " "

(२७७)

- ६—श्री सुविधिनाथजी ,, ६० क्रोड़ ,, ,,
 १०— ,, शीतलनाथजी ,, ६ ,, ,, ,,
 ११— ,, श्रेयास ,, ,, १ क्रोड़ सागर में सौ
 सागर ६६ लाख २६ हजार वर्ष कम
 १२— ,, वासुपूज्य स्वामी जी म० ५४ सागर ,,
 १३—श्री विमलनाथजी म० ३० ,, ,,
 १४—श्री अनन्त ,, ६ ,, ,,
 १५—श्री धर्मनाथ ,, ४ ,, ,,
 १६— ,, शान्तिनाथ ,, ३ सागर में पौन
 पत्य कमती
 १७— ,, कुंथुनाथ ,, अर्द्ध पत्य ,,
 १८— ,, अहनाथ ,, पाव पत्य में १
 क्रोड़ १ हजार वर्ष कम
 १९— ,, मल्लीनाथ ,, एक क्रोड़ ८ हजार वर्ष ,,

(२४८)

- २०—श्री मुनिमुद्रत स्वा० म० २४ साल वर्ष ■
 २१—श्री ममिनामश्री म० ६ साल वर्ष ■
 २२— " अरिष्ट सेमि " ५ " " ■
 २३—श्री पार्ष्ण्य ८२५२० वर्ष ।
 २४— महाबोर स्वा २५ वर्ष ■

इस कल बर के चान्तरे से प्रत्येक काळ बर में
 ४ ही तीर्थकर देवाधिदेव होते हैं ।

**विवाह किन किन तीर्थकरों का हुवा—
 या न हुआ ।**

- १ से १८ में एक तीर्थकरों का विवाह हुआ—
 १६ में से २२ " " " नहीं हुआ—
 २ २१ में २३, २४ में तीर्थकरों का विवाह हुआ—

तीर्थंकर कौन २ से स्वर्ग से आये थे वहां क्या २ स्थिति थी

१-सर्वार्थसिद्धि से-३३ सागर	१३-सहस्रार देव-१८ सागर
२-विजय विमान-३२ ,,	१४-प्राणत देवलोक २० ,,
३-७ वें प्रैवेयक- २६,,	१५-विजय विमान ३२ ,,
४-जयंत विमान-३२ ,,	१६-सर्वार्थसिद्धिवि. ३३
५- ,, ,, ,,	१७- ,, ,, ,, ,,
६-६ वें प्रैवेयक- ३१ ,,	१८- ,, ,, ,, ,,
७-६ वें प्रैवेयक- २८ ,,	१९-जयंत विमान ३२ ,,
८-विजय विमान-३२ ,,	२०-अपराजित वि० ,, ,,
९-आण देवलोक १६ ,,	२१-प्राणत देव २० ,,
१०-प्राणत ,, २० ,,	२२-अपराजित वि० ३२ ,,
११-अच्युत देव २२ ,,	२३-प्राणत देवलोक २० ,,
१२-प्राणत देवलोक २० ,,	२४- ,, ,, ,, ,,

(२८०)

२४ तीर्थंकरों के कुल का क्या २ गोत्र

१—१६ तक इत्यादि बरा— (गोत्र)

२०—२२ वें तक हरिवंश (१)

२१—२३—२४ वें तक इत्यादि ११ ()

२४ तीर्थंकर म० के शरीर का वर्ण

१ से ३ तक कांचन वर्ण के (पीला रंग)

४ से १२ वां तक कांचन वर्ण के

७ वां कांचन वर्ण का

८ वां ९ वां का रवेत रंग का

१० वां कांचन वर्ण के

११ " "

१२ " "

१४ " "

(२८१)

१५ वा काचन वर्ण

१६ " "

१७ " "

१८ " "

१९ वाँ २३ वाँ का हरा वर्ण

२० वाँ २२ वाँ का श्याम वर्ण

२१ वाँ २४ वाँ का काचन वर्ण

२४ तीर्थंकरों की जन्म भूमि (नगरी के नाम)

१. विनीता नगरी

२. अयोध्या "

३. सावत्थी "

४. अयोध्या "

५. अयोध्या नगरी

६. कौसुम्बी "

७. बनारसी "

८. चन्द्रपुरी "

(२८९)

६ काकम्दी नगरी	१७. गजपुर	नगरी
१० मरिहपुर	१८. गजपुर	,
११ सिंहपुरी	१९ मधुप	"
१२ चम्पापुरी ,	२० रात्रगुडी	"
१३ कन्निरपुर नगरी	२१ मधुरा	,
१४ अचोन्वा "	२२. छौरीपुर	"
१५ रत्नपुरी "	२३ बनारसी	"
१६ गजपुर नगरी	२४ कञ्चि कुवड	

(२४ तीर्थंकर की खण तिथि इस
प्रकार हैं) ।

१ आनाङ्ग कृष्ण ४	४ वैशाख शुक्ल ४
२ वैशाख शुक्ल १३	५ भाद्रपद ९
३ फाल्गुण ८	६ माघ कृष्ण ६

(२८३)

७. भाद्रव कृष्णा ८	१६. भाद्रव कृष्णा ७
८ चैत्र ,, ५	१७. श्रावण ,, - ६
९. फाल्गुण ,, ६	१८. फाल्गुण शुक्ला २
१० वैशाख ,, ६	१९. ,, ,, ४
११ ज्येष्ठ ,, ६	२० श्रावण ,, १५
१२. ज्येष्ठ शुक्ला ६	२१ आश्विन ,, १५
१३. वैशाख शुक्ला १०	२२ कार्तिक ,, १२
१४ श्रावण कृष्णा ७	२३ चैत्र कृष्णा ४
१५ वैशाख शुक्ला ७	२४ आषाढ शुक्ला ६

२४ तीर्थंकरों के जन्म समय क्या
नक्षत्र थे ? ये थे ।

१. उत्तराषाढा नक्षत्र	३ मृगशिरा नक्षत्र
२ रोहिणी ,,	४. पुनर्वसु ,,

(२८४)

३ मया	त०	१४. पुष्प	त०
४ चित्रा	"	१५. मरुषी	"
५ विरामका	"	१६. कुचिष्य	"
८ अमुगषा	"	१८. रेवती	"
९ मूल	"	१९. अरिषदी	"
१ पूर्वाषाढा	"	२०. ज्येष्ठा	"
११ मघा	"	२१. अरिषदी	"
१२. रात्रिषा	"	२२. चित्रा	"
१३ कृत्तिका भाद्रपद	"	२३. विरामका	"
१४ रेवती	"	२४ कृत्तिका पक्षगुप्ती	"



(२८५)

२४ तीर्थंकरों की जन्मराशि के नाम

१—धन	राशि	१३—मीन	राशि
२—वृश्चिक	"	१४—"	"
३—मिथुन	"	१५—कर्क	"
४—मिथुन	"	१६—मेष	राशि
५—सिंह	"	१७—वृश्चिक	"
६—कन्या	"	१८—मीन	"
७—तुला	राशि	१९—मेष	"
८—वृश्चिक	"	२०—मकर	"
९—धन	"	२१—मेष	"
१०—"	"	२२—कन्या	"
११—मकर	"	२३—तुला	"
१२—कुम्भ	"	२४—कन्या	"

(१८१)

२४ तीर्थंकर के शरीर पर चिन्ह हैं उनके नाम

- | | |
|-------------------------|-----------------------|
| १. बुधम का चिन्ह | १३. बण्ड का चिन्ह |
| २. हाथी का चिन्ह | १४. शिवातक का |
| ३. करव का चिन्ह | १५. बज्र का चिन्ह |
| ४. बंदर का चिन्ह | १६. मृग का चिन्ह |
| ५. कौबवाही का चिन्ह | १७. जल का चिन्ह |
| ६. पद्म कमल का चिन्ह | १८. वन्द्यार्चन चिन्ह |
| ७. सावित्र का चिन्ह | १९. ककरा का चिन्ह |
| ८. शम्भु का चिन्ह | २०. कण्डूय का चिन्ह |
| ९. मकर का चिन्ह | २१. कमल का चिन्ह |
| १०. श्रीधरस स्वास्तिक,, | २२. शंख का चिन्ह |
| ११. गजका का चिन्ह | २३. सर्प का चिन्ह |
| १२. भैरव का चिन्ह | २४. केसरीचिह्न चिन्ह |

(२८७)

२४ तीर्थंकर के शरीर की अवगहना (लम्बाई का प्रमाण)

१ ५०० धनुष	१३ ६० धनुष
२. ४५० धनुष	१४. ५० "
३. ४०० "	१५. ४५ "
४. ३५० "	१६ ४० "
५. ३०० "	१७ ३५ "
६. २५० "	१८. ३० "
७ २०० "	१९. २५ "
८. १५० "	२०. २० "
९. १०० "	२१. १५ "
१० ६० "	२२. १० "
११ ८० "	२३. ६ हाथ
१२. ७० "	२४. ७ "

(२८)

२४ तीर्थंकरों की आयुष्य का प्रमाण

१ ८४ कण्ड पूर्वे	१३ ६० कण्ड वर्षे
२ ७२ कण्ड पूर्वे	१४ ३० कण्ड वर्षे
३ ६ कण्ड पूर्वे	१५ १ कण्ड वर्षे
४ ५ कण्ड पूर्वे	१६ १ कण्ड वर्षे
५ ४ कण्ड पूर्वे	१७ ६५ हजार वर्षे
६ ३ कण्ड पूर्वे	१८ ८५ हजार वर्षे
७ २ कण्ड पूर्वे	१९ २५ हजार वर्षे
८ १ कण्ड पूर्वे	२० ३ हजार वर्षे
९ २ कण्ड पूर्वे	२१ १ हजार वर्षे
१० १ कण्ड पूर्वे	२२ १ हजार वर्षे
११ ८५ कण्ड वर्षे	२३ १ शत वर्षे
१२ ७२ कण्ड वर्षे	२४ ७१ वर्षे

(२८६)

२४ तीर्थंकरों में से राजगद्दी कितनों ने भोगी

१. ६३	लक्ष पूर्व	१३. ३० लाख वर्ष
२. ५३	" "	१४. १५ " "
३. ४४	" "	१५. ५ " "
४. ३६॥	" "	१६. २५ ह० व० म० चक्रवर्ती
५. २६	" "	१७. २३७५० म० चक्रवर्ती
६. २१॥	" "	१८. २१ ह० म० चक्रवर्ती
७. १४	" "	१९. राजगद्दी नहीं भोगी
८. ६॥	" "	२०. १५ ह० व०
९. १	" "	२१. ५ ह० व०
१०. ॥	" "	२२. राजगद्दी नहीं भोगी
११. ४२	" जम्बू	२३. " "
१२. राजगद्दी नहीं भोगी		२४. २ वर्ष तिलोत्थीपणे



(२८)

२४ तीर्थंकरों की आयुष्य का प्रमाण

१ ८४ वर्ष पूर्व	१३ ६० वर्ष वर्ष
२ ७२ वर्ष पूर्व	१४ ६० वर्ष वर्ष
३ ६ वर्ष वर्ष	१५ १० वर्ष वर्ष
४ २० वर्ष वर्ष	१६ १ वर्ष वर्ष
५ ४ वर्ष वर्ष	१७ ३५ वर्ष वर्ष
६ ३ वर्ष वर्ष	१८ ८५ वर्ष वर्ष
७ २० वर्ष वर्ष	१९ ३५ वर्ष वर्ष
८ १० वर्ष वर्ष	२० ३० वर्ष वर्ष
९ १ वर्ष वर्ष	२१ २० वर्ष वर्ष
१० १ वर्ष वर्ष	२२ १ वर्ष वर्ष
११ ८५ वर्ष वर्ष	२३ १ शत वर्ष
१२ ७२ वर्ष वर्ष	२४ ७१ वर्ष

(२८६)

२४ तीर्थंकरों में से राजगद्दी कितनों ने भोगी

१. ६३ लक्ष वर्ष	१३. ३० लाख वर्ष
२. ५३ " "	१४. १५ " "
३ ४४ " "	१५. ५ " "
४. ३६॥ " "	१६. २५ ह० व० म० चक्रवर्ती
५. २६ " "	१७. २३७५० म० चक्रवर्ती
६. २१॥ " "	१८. २१ ह० म० चक्रवर्ती
७. १४ " "	१९. राजगद्दी नहीं भोगी
८. ६॥ " "	२०. १५ ह० व०
९. १ " "	२१. ५ ह० व०
१०. ॥ " "	२२ राजगद्दी नहीं भोगी
११. ४२ " जर्घ	२३. " "
१२. राजगद्दी नहीं भोगी	२४. २ वर्ष तिलोमीपणे



(२१०)

२४ तीर्थंकरों ने कितनों के साथ दीक्षा ली ।

१	४	इक्ष्वाकु के साथ	१३	१	इक्ष्वाकु के साथ
२	१	११	१४	१	११
३	१	११	१५	१	११
४	१	११	१६	१	११
५	१	११	१७	१	११
६	१	११	१८	१	११
७	१	११	१९	१	११
८	१	११	२०	१	११
९	१	११	२१	१	११
१०	१	११	२२	१	११
११	१	११	२३	१	११
१२	१	११	२४	१	११
१३	१	११	२५	१	११
१४	१	११	२६	१	११
१५	१	११	२७	१	११
१६	१	११	२८	१	११
१७	१	११	२९	१	११
१८	१	११	३०	१	११
१९	१	११	३१	१	११
२०	१	११	३२	१	११
२१	१	११	३३	१	११
२२	१	११	३४	१	११
२३	१	११	३५	१	११
२४	१	११	३६	१	११
२५	१	११	३७	१	११
२६	१	११	३८	१	११
२७	१	११	३९	१	११
२८	१	११	४०	१	११
२९	१	११	४१	१	११
३०	१	११	४२	१	११
३१	१	११	४३	१	११
३२	१	११	४४	१	११
३३	१	११	४५	१	११
३४	१	११	४६	१	११
३५	१	११	४७	१	११
३६	१	११	४८	१	११
३७	१	११	४९	१	११
३८	१	११	५०	१	११
३९	१	११	५१	१	११
४०	१	११	५२	१	११
४१	१	११	५३	१	११
४२	१	११	५४	१	११
४३	१	११	५५	१	११
४४	१	११	५६	१	११
४५	१	११	५७	१	११
४६	१	११	५८	१	११
४७	१	११	५९	१	११
४८	१	११	६०	१	११
४९	१	११	६१	१	११
५०	१	११	६२	१	११
५१	१	११	६३	१	११
५२	१	११	६४	१	११
५३	१	११	६५	१	११
५४	१	११	६६	१	११
५५	१	११	६७	१	११
५६	१	११	६८	१	११
५७	१	११	६९	१	११
५८	१	११	७०	१	११
५९	१	११	७१	१	११
६०	१	११	७२	१	११
६१	१	११	७३	१	११
६२	१	११	७४	१	११
६३	१	११	७५	१	११
६४	१	११	७६	१	११
६५	१	११	७७	१	११
६६	१	११	७८	१	११
६७	१	११	७९	१	११
६८	१	११	८०	१	११
६९	१	११	८१	१	११
७०	१	११	८२	१	११
७१	१	११	८३	१	११
७२	१	११	८४	१	११
७३	१	११	८५	१	११
७४	१	११	८६	१	११
७५	१	११	८७	१	११
७६	१	११	८८	१	११
७७	१	११	८९	१	११
७८	१	११	९०	१	११
७९	१	११	९१	१	११
८०	१	११	९२	१	११
८१	१	११	९३	१	११
८२	१	११	९४	१	११
८३	१	११	९५	१	११
८४	१	११	९६	१	११
८५	१	११	९७	१	११
८६	१	११	९८	१	११
८७	१	११	९९	१	११
८८	१	११	१००	१	११

२४ तीर्थंकरों का दीक्षा लेते तप

- | | |
|---------------|----------------|
| १. घेले का तप | १३. घेले का तप |
| २. „ का तप | १४. बेले का तप |
| ३. „ का तप | १५. „ का तप |
| ४. „ का तप | १६. „ का तप |
| ५. नित्य भक्त | १७. „ का तप |
| ६. एक व्रत | १८. „ का तप |
| ७. बेले का तप | १९. तेले का तप |
| ८. „ का „ | २०. बेले का तप |
| ९. „ का „ | २१. बेले का तप |
| १०. „ का „ | २२. घेले का तप |
| ११. „ का „ | २३. बेले का तप |
| १२. „ का „ | २४. बेले का तप |

२४ तीर्थंकरों की दीक्षा नगरी के नाम

(१) विनीता घग्गी	(१३) कन्निङ्गपुर नगरी
(२) अयोध्या "	(१४) अयोध्या "
(३) सावली	(१५) रत्नपुरी "
(४) अयोध्या	(१६) गङ्गपुर "
(५) " "	(१७) गङ्गपुर "
(६) कौस्तुभी "	(१८) " "
(७) बनारसी "	(१९) मिथला "
(८) बगलपुरी "	(२०) धनगुप्ती "
(९) काकरी "	(२१) मथुरा "
(१०) भरिङ्गपुर नगरी	(२२) सोनीपुर "
(११) सिद्धपुरी	(२३) बनारसी "
(१२) बगलपुरी	(२४) काशीपुरी "

२४ तीर्थंकरों के प्रथम पारणा स्थान व आहार दोनों

१-भेयास के घर इक्षुरस	१३-जयरामा के घर चीरका
२-ब्रह्मदत्त " " चीरका	१४-विजयरामा " "
३-सुरेन्द्र " " "	१५-धनसिंह के " "
४-इन्द्रदत्त " " "	१६-सुमित्र के " "
५-पद्म " " "	१७-व्याघ्रसिंह " "
६-सोमदेव " " "	१८-अपराजित " "
७-माहेन्द्र " " "	१९-विश्वसेन " "
८-सोमदत्त " " "	२०-ब्रह्मदत्त " "
९-पुष्प " " "	२१-दिनकुमार " "
१०-पुनर्वसु " " "	२२-वरदिन " "
११-नन्द " " "	२३-धन्यनाम " "
१२-सुनन्द " " "	२४-बाहुल माधव " "

२४ तीर्थंकरों की दीक्षा तिथि व दीक्षा किस वृद्ध के नीचे ली ।

	वृद्ध	पुत्र	तत्पुत्र
१—वैश्व कृष्ण ८	सर्व	"	"
२—माध कृष्ण ६	विश्व	"	"
३—मार्गशास्त्रे शुक्ला १५	विश्व	"	"
४—माध शुक्ला १२	विश्व	"	"
५—वैशाख " ६	विश्व	"	"
६—कार्तिक कृष्ण १३	विश्व	"	"
७—अश्वि शुक्ला १३	विश्व	"	"
८—वैश्व कृष्ण १३	विश्व	"	"
९—मार्गशीर्ष " ६	विश्व	"	"
१०—माध १२	विश्व	"	"
११—अश्वि " १३	विश्व	"	"

१२—फाल्गुण कृष्णा १५ -	पाडल वृक्ष तले
१३—माघ शुक्ला ४	जम्बू " "
१४—वैशाख कृष्णा १४	अशोक " "
१५—माघ शुक्ला १३	दधिपर्ण " "
१६—ज्येष्ठ कृष्णा १४	नन्दी " "
१७—चैत्र " ५	भीलक " "
१८—मार्गशीर्ष शुक्ला ११	आम्र " "
१९— " " ११	अशोक " "
२०—फाल्गुण " १२	चम्पक " "
२१—असोज कृष्णा ६	वकुल " "
२२—श्रावण शुक्ला ६	वैढस " "
२३—पौष कृष्णा ११	घातकी " "
२४—मार्गशीर्ष " १०	शाल " "

(२६६)

२४ तीर्थंकर कौन कौन कितने काल सुषमास्थावस्था में रहे

१ सुषमास्था रहे	१ सुषमास्था रहे
१. ॥	१२ वर्ष
२. ॥	१४ ॥
३. ॥	१८ ॥
४. ॥	२० ॥
५. ॥	२४ वर्ष
६. ॥	२८ ॥
७. ॥	३२ ॥
८. ॥	३६ ॥
९. ॥	४० ॥
१०. ॥	४४ ॥
११. ॥	४८ ॥

(२६७)

१२. छयास्थ रहे	१ वर्ष मास
१३. "	२ मास
१४. "	३ वर्ष
१५. "	२ "
१६. "	१ "
१७. "	१६ "
१८. "	३ "
१९. "	१ याम
२०. "	११ मास
२१. "	६ "
२२. "	५४ दिन
२३. "	८३ दिन
२४. "	१२ वर्ष

(२१८)

२४ तीर्थंकर केवल ज्ञान समय तप

१ ठेका	६ एक मव
२ बेका	७ से २१ नें एक बेका
३ कला	१२ ठेका
४ कला	१३ ठेका
५ कला	१४ बेका

२४ तीर्थंकर की केवल ज्ञान तिथियाँ इस प्रकार थी

१ कार्तिक कृष्ण ११	६ वैश्व शुक्ल १२
२ चैत्र ११	७ कार्तिक कृष्ण ६
३ कार्तिक ११	८ कार्तिक कृष्ण ७
४ चैत्र ४	९ कार्तिक शुक्ल ६
५ वैश्व शुक्ल ११	१० चैत्र कृष्ण १४

(२६६)

११. माघ कृष्णा	३	१८. कार्तिक शुक्ला	१२
१२. माघ शुक्ला	२	१९. मृगशीर्ष ,,	११
१३. पौष शुक्ला	६	२०. फाल्गुण कृष्णा	११
१४. वैशाख कृष्णा	१४	२१. मृगशीर्ष शुक्ला	११
१५. पौष शुक्ला	१५	२२. आश्विन कृष्णा	१२
१६. पौष शुक्ला	६	२३. चैत्र कृष्णा	४
१७. चैत्र ,,	३	२४. वैशाख शुक्ला	१०

२४ तीर्थंकरों के पिता, माता, जन्म मास व तिथि का वर्णन, २४ तीर्थंकर महाराज के लेख में इसी ग्रन्थ के पूर्व आ चुका है, उसमें पाठक पढ़ने का पुरुषार्थ करें ।



२४ तीर्थंकरों के केवल ज्ञान नगरी

१ पुरिमठावा	नगरी	१३ कपिलपुर	नगरी
२ अयोध्या	नगरी	१४ अयोध्या	नगरी
३ छावली	"	१५ रत्नपुरी	"
४ अयोध्या	"	१६ गजपुर	"
५ अयोध्या	"	१७ गजपुर	"
६ कौमुदी	"	१८ गजपुर	"
७ बगरही	"	१९ विविध	"
८ बगुरही	"	२० राजपुरी	"
९ कावली	"	२१ मधुपुर	"
१० मरिचपुर	"	२२ गिरगार	"
११ सिद्धपुर	"	२३ बगुरही	"
१२ बगुरापुर	"	२४ राजपुर	"

(३०१)

२४ तीर्थंकरों ने दीक्षा पाली

१ से ८ तक लाख पूर्व	१७. २३७५० वर्ष
९ आषा	१८. २१ हजार वर्ष
१० पाव	१९. ५४६०० हजार वर्ष
११ इष्कीस	२०. ७॥ हजार वर्ष
१२ चौपन्न	२१. २॥ हजार वर्ष
१३ पन्द्रह	२२. ७०० सौ वर्ष
१४ साढे सप्त	२३. ७० वर्ष
१५ अढाई	२४. ४२ वर्ष

२४ तीर्थंकरों के गणधरों की संख्या

मुख्य गणधरों का नाम

१-८४ पुण्डरीक	३-१०२ चारु
२-६५ सिंहसेन	४-११६ वज्रनाभ

(३०२)

५-१०० वरम

६-१०० प्रद्योतम

७-६५ चिदम

८-६३ दिग

९-८८ वरधक

१ -८१ सम्भ

११-०६ कल्प

१२-६६ सुमूम

१३-५० मन्दर

१४-३ वरा

१५-४३ अरिगन्धपर

१६-३६ वर पुष

१७-३३ सावि

१८-३३ कु भ

१९-२८ अरिग

२०-१८ मल्ली

२१-१७ सुम

२२-११ वरध

२३-१० आर्यदिन

२४-११ इन्द्रमूर्ति



२४ तीर्थंकरों के साधुओं की संख्या

१. ८४०००	१३. ६८ हजार
२. १०००००	१४. ६६ "
३. २०००००	१५. ६४ "
४. ३०००००	१६. ६२ "
५. ३२००००	१७. ६० "
६. ३३००००	१८. ५० "
७. ३०००००	१९. ४० "
८. २५००००	२०. ३० "
९. २०००००	२१. २० "
१०. १०००००	२२. १८ "
११. ८४०००	२३. १६ "
१२. ७२०००	२४. १४ "

(३०४)

२४ तीर्थंकरों के साधियों की संख्या

(१) ३ लाख	(१३) १०००००००
(२) ३३००००	(१४) ६९०००
(३) ३३६०००	(१५) ६२४०
(४) ६३ ००	(१६) ६१६०
(५) ४३ ० ०	(१७) ६ ६ ०
(६) ४२	(१८) ६
(७) ४३	(१९) ४४ ००
(८) ३८०	(२०) ४ ००
(९) १२ ०००	(२१) ४१
(१०) १ ६	(२२) ४ ०
(११) १ ३	(२३) ३८०
(१२) १००	(२४) ३६

(३०५)

२४ तीर्थंकरों के प्रथम साध्वीजी के नाम

(१) ब्राह्मी

(२) फाल्गु

(३) श्यामा

(४) अजिता

(५) काश्यपी

(६) रति

(७) सौमा

(८) सुमना

(९) वारुणी

(१०) सुयशा

(११) धारणी

(१२) धरणी

(१३) धरा

(१४) पद्मा

(१५) आर्यसिवा

(१६) सुचि

(१७) दामिनी

(१८) रक्षिता

(१९) वधुमती

(२०) पुष्पवती

(२१) अनिता

(२२) यक्षदिना

(२३) पुष्प चूडा

(२४) चन्दनमा

(१०६)

२४ तीर्थंकरों के वैक्रिय लब्धि कितने २ थे ।

१—२ ३००	१३—६००
२—२०४००	१४—८
३—१६८	१५—००००
४—१६	१६—६ ०
५—१८४०	१७—२१
६—१६१०८	१८—७३
७—१५१ छौ	१९—१६
८—१४	२०—९
९—१३	२१—५
१०—१९	२२—१५
११—११	२३—११
१२—	२४—००

(३८७)

२४ तीर्थंकरों के वादियों की संख्या

१—१२६५०	१३—३६००
२—१२४००	१४—३२००
३—१२०००	१५—२८००
४—११०००	१६—२४००
५—१०४००	१७—२०००
६—६६००	१८—१६००
७—८४ सौ	१९—१४००
८—७२ सौ	२०—१२००
९—६ हजार	२१—१०००
१०—५८ शत	२२—८००
११—५ हजार	२३—६००
१२—४७००	२४—४००

(३०८)

२४ तीर्थंकरों के अवधि ज्ञानियों की संख्या

(१) ६०००	(१३) ४८००
(२) ६४००	(१४) ४३०
(३) ६६ •	(१५) ३६००
(४) ६८	(१६) ३ •
(५) ११	(१७) ३५
(६) १	(१८) २६०
(७) ६	(१९) २२०
(८) ८०	(२०) १८००
(९) ८४	(२१) १४
(१०) ७२	(२२) १५००
(११) ६	(२३) १००
(१२) ५४०	(२४) १६००

(३०६)

२४ तीर्थंकरों के मनः पर्यवर्कों की सं०

१. १२७५०	१३. ५५००
२. १२५५०	१४. ५०००
३. १२१५०	१५. ४५००
४. ११६५०	१६. ४०००
५. १०४५०	१७. ३३४०
६. १०३००	१८. २५५१
७. ६१५०	१९. १७५०
८. ८०००	२०. १५००
९. ७५००	२१. १२५०
१०. ॥	२२. १०००
११. ६०००	२३. ७५०
१२. ६५००	२४. ५००

(३१)

२४ तीर्थंकरों के फेवलियों की संख्या

१-२०००

१३-२५००

२-२२

१४-२००

३-१५

१५-४२ ०

४-१४

१६-४१

५-१३

१७-१२

६-१२

१८-२८००

७-११

१९-२२०

८-१ ०

२०-१८००

९-७३

२१-१६ ०

१०-४००

२२-१७ ०

११-६५

२३-१ ००

१२-६

२४-४००

(३११)

२४ तीर्थंकरों के चौदह पूर्वधारी कितने २ थे ।

१. ४७५०	१३. ११००
२. ३७२०	१४. १०००
३. २१५०	१५. ६००
४. १५००	१६. ८००
५. २४००	१७. ६७०
६. २३००	१८. ६१०
७. २०३०	१९. ६६८
८. २०००	२०. ५००
९. १५००	२१. ४५०
१०. १४००	२२. ४००
११. १३००	२३. ३५०
१२. १२००	२४. ३००



(३१२)

२४ तीर्थंकरों के चारह प्रतभारी भावकों की संख्या

१ ३५०	१३ २०८०
२ २६८ ०	१४ २०१०००
३ २६३०	१५ २ ४००
४ २८८	१६ १६ ०००
५ २८१	१७ १०६
६ २७६ ०	१८ १८४०
७ २५७ ०	१९ १८३००
८ २५	२ १०२ ०
९ २२६	२० १०० ०
१० २८३	२१ १६३००
११ २७३	२२ १६४०
१२ २१५	२३ १५३



(३१३)

२४ तीर्थंकर के बारह व्रत धारिका श्राविकाओं की संख्या

१. ५५४०००	१३. ४२४०००
२. ५४५०००	१४. ४१४०००
३. ६३६०००	१५. ४१३०००
४. ५२७०००	१६. ३६३०००
५. ५१६०००	१७. ३८१०००
६. ५०५०००	१८. ३७२०००
७. ४६३०००	१९. ३७००००
८. ४७६०००	२०. ३५००००
९. ४७१०००	२१. ३४८०००
१०. ४५८०००	२२. ३३६०००
११. ४४८०००	२३. ३३६०००
१२. ४३६०००	२४. ३१८०००

(११४)

२४ तीर्थंकरों के देव व देवी कौन २ हैं उनके नाम

देव

देवी

देव

देवी

१ गोमुख

चक्रेश्वरी

१३. परमुख विदिषा

२ महादेव

अखिलेश्वरी

१४. पद्माक्षदेव अंशुया

३ त्रिमूर्ति

दुर्गारि

१५. विजयदेव कल्पवृक्ष

४ नागदेव

कालिका

१६ गङ्गादेव निर्वाही

५ तुलसी

महाकाली

१७ गङ्गादेव काली

६ कुम्भमेख

श्यामा

१८. यक्षदेव यक्ष

७ मार्तण्ड

गङ्गा

१९ कुबेर वरदायिका

८ विष्णु

शुक्ली

२० कश्यप नारददा

९ अखिलेश्वर

सुगारिका

२१ अश्विनी गङ्गा

१० महादेव

अरोगा

२२ गोमेध अम्बिका

११ अष्ट

मातङ्गी

२३ पद्मदेव पद्मावती

१२ कुमारदेव

चण्डा

२४ मार्तण्डदेव सिद्धादिदा

(३१५)

२४ तीर्थंकर की मोक्ष संश्लेषणा

(मोक्ष समय का तप)

१—६ दिन का व्रत (उपवास)

२—२३ तक एक २ मास तप था ।

२४—दो दिन का वेला तप

२४ तीर्थंकर का निर्वाण समय आसन

१—पद्मासन मे

२ से २१ तक कायोत्सर्ग

२२—पद्मासन से

२३—कायोत्सर्ग

२४—पद्मासन से



(११६)

२४ तीर्थंकरों का निर्वाण स्थान

१—अष्टापुर वे निर्वाण

२—से ११ तक सम्मोदशिकर पर्वत वे

१२—बम्बापुर

१३ व २१ तक सम्मोद शिकर

२२ गिरनार पर्वत वे

२३ सम्मोद शिकर

२४ वावापुरी

२४ तीर्थंकरों की निर्वाण तिथि

१ माघ कृष्ण १३

२ वैश्व शुक्ल ३

२ वैश्व शुक्ल ३

३ मार्गशीर्ष कृष्ण ११

३ " ३

४ अश्वि शुक्ल ३

४ वैशाख शुक्ल ३

५ भाद्रपद ३

(३१७)

६ भाद्रव शुक्ला ६	१७ वैशाख कृष्णा १
१०. वैशाख कृष्णा २	१८. मागशीर्ष शु० १०
११. भावण ,, ३	१९. फाल्गुण शु० १२
१२. आषाढ शुक्ला १४	२०. ज्येष्ठ कृष्णा ६
१३. आषाढ कृष्णा ७	२१. वैशाख ,, १०
१४. चैत्र शुक्ला ५	२२. आषाढ शु० ८
१५. ज्येष्ठ ,, ५	२३. भावण शु० ८
१६. ,, कृष्णा १३	२४. कार्तिक कृष्णा १५

२४ तीर्थंकरों का मोक्ष समय परिवार
कितना २ था ।

१ १० हजार	४. १ हजार
२ १ हजार	५. १ ,,
३ १ ,,	६. ३०८

(३१८)

७	५०	१६	६०
८	एक हजार	१७	१ हजार
९	॥ ॥	१८	५ हजार
१०	॥ ॥	१९	५०
११	॥ ॥	२०	१ हजार
१२	६	२१	॥
१३	६ ०	२२	५३६
१४	७०	२३	६६
१५	१०८	२४	अच्छे

२४ तीयकर कितने २ भव कर तीर्थ
कर पद प्राप्त किया ।

१	१६ भव किये	४	३ भव किये
२	३ ॥	५	॥ ॥ ॥
३	॥	६	॥ ॥ ॥

(३१६)

७. ३ भव क्रिये	१६ १२ भव क्रिये
८. " " "	१७. ३ " "
९ " " "	१८. " " "
१० ३ " "	१९. " " "
११. " " "	२०. " " "
१२ " " "	२१ ३ " "
१३. " " "	२२. ६ " "
१४ " " "	२३ १० " "
१५ " " "	२४ २७ " "

२४ तीर्थंकरों के कितने २ पाठ
मोक्ष गये ।

१ से १७ तक असख्यात पाठ मोक्ष गये ।

१८ से २३ तक सख्यात पाठ मोक्ष गये ।

२४. दो पाठ मोक्ष गये

(३२०)

२४ तीर्थंकरों के कौन २ गण थे ।

१ मानव गण	११ मानव "
२ " "	१४ देव "
३ देव "	१५ " "
४ " "	१६ मानव
५ पक्षस गण	१७ पक्षस गण
६ " "	१८ देव गण
७ " "	१९ " "
८ देव गण	२० " "
९ पक्षस गण	२१ " "
१० मानव गण	२२ पक्षस गण
११ देव गण	२३ " "
१२ पक्षस "	२४ मायव गण

(३२१)

२४ तीर्थंकरों के गर्भ काल मान

१. ६ मास ४ दिन रहे	१३. ८ मास २१ दिन रहे
२. ८ मास २५ दिन रहे	१४. ६ मास ६ दिन रहे
३. ६ मास ६ दिन रहे	१५. ८ मास २६ दिन रहे
४. ८ मास २८ दिन रहे	१६. ६ मास " "
५. ६ मास ६ दिन रहे	१७. ६ मास " "
६. ६ मास ६ दिन रहे	१८. ६ मास " "
७. ६ मास १६ दिन रहे	१९. ६ मास ७ दिन रहे
८. ६ मास ७ दिन रहे	२०. ८ मास ८ दिन रहे
९. ८ मास २६ दिन रहे	२१. ६ मास ८ दिन रहे
१०. ६ मास ६ दिन रहे	२२. ६ मास ८ दिन रहे
११. ६ मास ६ दिन रहे	२३. ६ मास ६ दिन रहे
१२. ८ मास २० दिन रहे	२४. ६ मास ७॥ दिन रहे

श्रावणजी के गुण २१ या गृहस्थी के भी

१. वरार हृदय होवे २. परावन्त होवे
३. सौम्यप्रकृति वात्स्य होवे ४. लोकप्रिय होवे
५. अकर प्रकृति ६. पाप भीड होवे
७. बर्म सखावान् होवे ८. दासिपद (चट्ट) होवे
९. कल्याणान् होवे १०. दय्यवन्त होवे
११. सम्बन्ध स्वभाव वात्स्य होवे
१२. गमीड, अविष्णु, विवेकी होवे
१३. गुह्यानुपगमी होवे १४. कर्मोपदेश करने वाला होवे
१५. स्वाध पक्षी होवे १६. दुःख विचारक होवे
१७. मर्मादा पूर्वक सम्बन्ध करके वात्स्य होवे
१८. विलस शीत होवे १९. कुतूहल वचनार मर्मज्ञे वात्स्य
२०. पटोपकारी होवे २१. पराधनमें अदा आपद, वर दे

(३२३)

तीर्थंकर गोत्र (नाम)

बांधने के २० कारण

(श्री ज्ञाता सूत्र, आठवा अध्यायन)-

१. श्री अरिहंत भगवान् के गुण कीर्तन करने से
२. श्री सिद्ध भगवान् के गुण कीर्तन करने से
३. आठ प्रवचन (५ समिति, ३ गुप्त) का आराधन करने से ।
४. गुणवंत गुरु के गुण कीर्तन करने से
५. स्थविर (वृद्ध मुनि) के गुण कीर्तन करने से
६. बहुभुत के गुण कीर्तन करने से
७. तपस्वी के गुण कीर्तन करने से
८. सीखे हुवे ज्ञान को बारम्बार चिन्तन से ।
९. समकित निर्मल पालने से ।

(३२४)

१० विनय (७-१०-१३४) प्रकट से करने से ।

११ समय समय पर आचरणक करने से ।

१२ किये हुये प्रथम प्रस्थापन निर्मल पद्धति से ।

१३ गुण (चर्म गुण गुण) व्यापक करने से ।

१४ नाद प्रकट की निर्मल (तप) करने से ।

१५ दान (समय दान-सुखदान) देने से ।

१६ वैद्यक्य (१ प्रकट की सेवा) करने से ।

१७ चतुर्विध संघ की शान्ति-समाधि (सेवा-योग) देने से ।

१८ मन्त्र २ अपूर्ण तत्त्वज्ञान पद्धति से ।

१९ सूत्र सिद्धान्त की भक्ति (सेवा) करने से ।

२० मिथ्यात्व नाश और समकित कथित करने से ।

नीचे व्यवस्थान्त कर्मों को कहाते हैं । इन व्यवस्थाओं को करते हुये उत्कृष्ट रसायन (भावना)

भावे सो धीर्यकर गोत्र कर्म बाधे ।

जल्दी मोक्ष जाने के २३ वोल

१. मोक्ष की अभिलाषा रखने से ।
२. सम तपश्चर्या करने से ।
३. गुरु मुख द्वारा सूत्र सिद्धान्त सुनने से ।
४. आगम सुनकर वैसी ही प्रवृत्ति करने से ।
५. पांच इन्द्रियों को दमन करने से ।
६. छकाय जीवों की रक्षा करने से ।
७. भोजन करने के समय साधु साध्वियों की भावना माने से ।
८. सद्विज्ञान सीखने व सिखाने से ।
९. नियाणा रहित एक फोटी से व्रत में रहता हुआ नव फोटी से व्रत प्रत्याख्यान करने से ।

१० दश प्रकार की वैशाखरूप करने से ।

११ कष्टों को पतले करने निमूक करने से ।

१२ राशि होते हुये जन्म करने से ।

१३ कर्मे हुये पापों की सुरक्ष आलोचन करने से ।

१४ किये हुये कर्मों को निर्मल पावने से ।

१५ अभयदान सुपात्र दान देने से ।

१६ शुद्ध मन से शौक (मद्यपय) पावने से ।

१७ निर्द्वेष (पाप रहित) मधुर वचन बोलने से ।

१८ महसूस किये हुये संयम मार को अर्द्ध पावने से

१९ धर्म शुद्ध व्यवस व्यये से ।

२० हर महान ६६ पोषण करने से ।

२१ दानों समय आचरण (प्रतिफल) करने से ।

२२ पिबन्ती राजि में धर्म आगम्य करते हुये टीक
मनोरथादि फलजय से ।

(३२७)

२३. मृत्यु समय आलोचनादि से शुद्ध होकर समाधि पंडित मरण मरने से ।

इन २३ बोलों को सम्यक् प्रकार से जानकर सेवन करने से जीव जल्दी मोक्ष में जावे ।

—०—

परम कल्याण के ४० बोल

- | | |
|---------------------------|---------------------------|
| गुण | दृष्टात, सूत्र की साक्षी |
| १. सम्यक्त्व निर्मल पातने | श्रेणिक नृप (ठाणाग सूत्र) |
| से । | का कल्याण |
| | हुआ । |
| २. नियाणा रहित तप- | तामली तापस (भग० |
| श्चर्या से । | का कल्याण सूत्र) |
| | हुआ । |

गुण्य

दशोष्ठ, सूत्र की साक्षी

३ तीस योग विरचन
रखने से ।गङ्गासुतामात्र का (कथ्य
कथ्यय्य दुष्मा कृष्णग सूत्र)४ समभाव से फीका
सहने से ।जगद्विमात्री २ २
का कथ्यय्य दुष्मा५ पंच महात्म्य निर्मल
बाह्यसे से ।गौतम स्वामी (महा सूत्र)
का कथ्यय्य दुष्मा६ प्रमाद बोध अप्रवर्णी
होने से ।रीत्यय्य एवमि (वाता सूत्र)
का कथ्यय्य
दुष्मा ।

७ इन्द्रिय दमन करने से

हरकेरी सुनि (वस्तु०
का कथ्यय्य दुष्मा सूत्र)८ मित्रों में माया कपट
करने से ।मल्लिनाथ मसुत्री (वाता
का कथ्यय्य देवे सूत्र)
दुष्मा ।

गुण

६. धर्म चर्चा करने से ।

दृष्टात, सूत्र की साक्षी
केशी गौतमजी (८० सूत्र)
का कल्याण हुआ

१०. सत्य धर्म पर श्रद्धा
करने से ।

वरुण नाग (भगवत सूत्र)
नतुण का०

११. जीवों पर करुणा
करने से ।

मेघ कुमार का (हाथी के०
कल्याण हुआ (ज्ञाता सूत्र)

१२. सत्य बात निशंकता
से कहने से ।

आनन्द श्रावक (उपाशक
का कल्याण (दशाग
हुआ । सूत्र)

१३. कष्ट पड़ने पर भी
व्रतों की दृढता रखने से

अवड और चववाई सूत्र
७०० शिष्य का
कल्याण हुआ

१४. शुद्ध शीलव्रत
पालने से ।

सुदर्शन सेठ सुदर्शन
का क० चारित्र

गुण	द्वैत	सुख की सखी
१४. परिमह की ममता	कपित्थ	कपपम्भब०
स्थगने से ।	माह्म्य का क०	सुख
१५. कदारता से सुपात्र	मुमुक्षु गवा	विपाक
दान देने से ।	पवि का क	सुख
१६. संयम को बिगठे	एतुभमती	कपपम्भ-
हुने को स्थिर करने से	रचनेमी०	बन सुख
१७. कम वस्तु चढ़ते	बलाभुमि	ब० सुख
भाव करने से ।		
१८. अम्भानि से बैया	पंचक मुनि०	काया सुख
बुल्ल करने से ।		
१९. सदैव अमित्य भावना	मरत चक्रवर्ती	अम्भुप०
भावे से ।		
२०. अशुभ	परिष्कार	असल चन्द्र
लेकने से ।	मुनि०	नेष्टिक
		चरित्र

गुण

दृष्टांत, सूत्र की साक्षी

२२. सत्यज्ञान पर अद्धा अर्हन्नक आव० ज्ञाता सूत्र करने से ।

२३ चतुर्विध संघ की सनतकुमार च० भग-
सेवा करने से पूर्व भव० वती०

२४. उत्कृष्ट भाव से मुनि बाहुबलीजी ऋषभदेव
सेवा करने से । पूर्व भव में चरित्र

महा निर्जरा की

२५. शुद्ध अभिप्रह करने से पाच पादव० ज्ञाता सूत्र

२६ धर्म दलाली करने से श्री कृष्णवासु० अन्तगद

२७. सूत्र ज्ञान की भक्ति, उदाई राजा० भगवती
करने से ।

२८. जीव दया पालने से धर्मरुचि साधु० ज्ञातासूत्र

२९. व्रत से गिरते ही अर्णक मुनि० आवश्यक
सावधान होने से ।

छात्रों का छात्रों की छात्रों

१०. आपत्ति में धैर्य रखने से ।
 ११. विनय की शक्ति प्रभावहीन होती है ।
 १२. व्यर्थों का मोह छोड़ दिया करने से ।
 १३. शक्ति होते समा करने से ।
 १४. सहोदर भाइयों का भी मोह त्यागने से ।
 १५. दयादि के उपसर्ग सहने से ।
 १६. देव गुरु चन्दन से निर्मील होने से ।
- कामुक वृत्ति०
 सुनि०
 प्रभावहीन होती है ।
 मेघरथ शास्त्रिणाथ
 एका० चारित्र
 तदेष्टी एका० एवं प्रसेनी
 सूत्र
 एत वक्रदेव १३ एका
 पु० चरित्र
 कामदेवभावक वरासक
 सूत्र
 सुदर्शन अंगद सूत्र
 छेठ०

- गुण दृष्टात, सूत्र की साक्षी
 ३७. चर्चा से वादियों को मण्डूक भावक० भगवती
 जीतने से । सूत्र
 ३८. मिले हुए निमित्त आर्द्रकुमार० सूत्रकृताग
 पर शुभ भाव से ।
 ३९. एकत्व भावना भाने से नमिराजर्षि० उत्त० अ० ६
 ४०. विषय सुख में गृह्य जिनपाल० क्षातासूत्र
 न होने से ।



(३३४)

ग्रह शान्ति पाठ

(१) सूर्य और मंगल की पीड़ा हो तो ॐ ह्रीं क्लमो
सिद्ध्यर्थ ॥

(२) बानर और शुक्र की पीड़ा हो तो ॐ ह्रीं क्लमो
परिहृताय ॥

(३) बुध की पीड़ा हो तो ॐ ह्रीं क्लमो वरुणाय ॥

(४) शुक्र बृहस्पति की पीड़ा हो तो ॐ ह्रीं क्लमो आव-
रिषाय ॥

(५) शनि, छद्म केतु इन की पीड़ा हो तो ॐ ह्रीं
क्लमो लोप सप्तसाधूय ॥

कितने दिन ग्रह की पीड़ा जसे कितने दिन मर्याद
मध्य मुहूर्त में एक हजार पाठ का करव करे ।

(३३५)

॥ सदा मंगल कारक पाठ ॥

॥ ॐ असि आठसाय नमः ॥

सदैव त्रिकाल में १०८ बार जप से गृह कलह
दूर हो, शान्ति, सम्पत्ति, प्राप्त हो। मनो विकार
निवारण हों ॥



॥ कृपा की एक रश्मि ॥

सुखद स्मृति पर त्वर्गाथ मातृ-छाया-रश्मि परछ व
 सुखात्मा महा वपाशिवि परम दयामु सुख संयमी श्री
 वपस्वी गङ्गपतिरायणी महाराज व गङ्ग मङ्गलाटी
 राक्षसार्ग जैन समाज के प्राण श्रीमच्छैलानन्द
 वैष्णव केराटी श्री स्वामी काशीरायणी म० का अपूर्व
 उपकार है, सदा इन महापुरुषों का याद की हैं । और
 श्री गङ्गधर्म्म प्रवर्तक गङ्ग मङ्गलाटी सुख संयमी कृष्ण
 स्वामी चतुर्विध संघ के परम हिसेवी श्री स्वामी
 भागमङ्गली म की कृष्ण से यह पुस्तकें मुक्त व हृदय
 अथ आपकी इस संयम पर अवसर कृपा यहि है ।
 येही दण यहि यही रहें ।

आपका शिष्य-मुनि त्रिलोकचन्द्र,
 वैष्णवी ।

जीवन परिचय की भलक

श्री परिहृत रत्न श्री स्वामी त्रिलोकचन्द्रजी महाराज का जन्म स्थान राजस्थान जोधपुर स्टेट में फालना स्टेशन के बिल्कुल निकट नगर खुडाला में ओसवाल वंश में हुआ। यहाँ ओसवाल जैनों के ३०० के करीब घर हैं, पर सभी श्री श्वेताम्बर मूर्ति पूजक हैं, यहाँ की बस्ती बड़ी सुन्दर दंग से है, अधिक जनता विदेश से व्यापार का सम्बन्ध रखती हैं, यथा पूना, बम्बई, अहमदाबाद, गुलाबपुरादि में। आपके पिताजी भी बाम्बे में ही व्यापार व्यवहार करते थे। अब भी आपके सासारिक सम्बन्धी भाई भतीजे पूना व बाम्बे में व्यवसाय करते हैं।

हैं आपके पिताजी का नाम श्रीमान् बमहस्पती
 व मातेरवटी का नाम बराबन्सी देवी का आपकी
 बाबूबाबूसा से ही धर्म ज्ञेय था, आपकी माता व
 मामीजी के भी धार्मिक जब संस्कार थे, जब कुछ
 व्यवस्था में बिद्याऽभ्यसकथन, और छोटी व्यवस्था
 में ही शिक्षा व पञ्चाङ्ग ग्रन्थ में आने का शुभ कर्म
 से सम्पादन हुआ, और जो प्रसूतक बरोबुद्ध स्वधिर
 वह विभूषित श्री स्वामी भगवन्महो महाराज की
 असीम कृपा दृष्टि से पवित्र सम्मार्गिक स्वानुष्ठान
 होन समय धर्म प्राप्त हुआ । इस महात्मा का अपूर्व
 दशम पञ्चाङ्ग ग्रन्थ में आपूर्वका शहर में दि
 सं १३७६ के माघ माघ में हुए, जब वरुण महा-
 तपोनिधि पवित्रात्मा सुसंजमी भी उपरवी गङ्गापति-
 राजमी महाराज व बाबू बराबरी ग्रन्थ स्वभावी

(३३६)

शास्त्रमर्मज्ञ न्याय मार्गान्वेषक जप तप समाधि
स्थ श्री स्वामी भागमलजी महाराज उक्त नगर में
ही विराजमान थे । श्री गुरुदेवजी महाराज के
चरण सेवा में भाव चारित्री रूप रहे करीब दो वर्ष
के अभ्यास के पश्चात् स्टेट नालागढ़ में आप श्री जी
का दोहोत्सव बड़ा समारोह से हुआ, वहाँ की जैन
बिरादरी ने विशाल धनराशि लगा के यह शुभ कार्य
पूर्ण किया । उस समय परमप्रतापी मधुर भाषी जैना-
जैन शास्त्र के प्रकाण्ड मर्मज्ञ बाल ब्रह्मचारी श्री
युवाचार्य पदालकृत श्री काशीरामजी महाराज ने
शिष्य मण्डली से पधार कर दीक्षा संस्कार का सर्व
कार्य किया, और उस वक्त जो धारा प्रवाह मुक्तकठ
से आप श्री जी ने दो घंटा से अधिक प्रभावशाली
भाषण दिया, जिससे वहाँ का नरेश व उपस्थित कई

हजार की जनता जबरदस्त कर विधित हो चली, और
 वहाँ नरेरा ने अपने मन्त्री एवं सचिव का एग्रीर
 लिहलो से कहा मेरे इस जीवन का अन्त परिणाम ही
 मौख है, जो ऐसा स्वार्थ और ऐसा सद्व्यवस्था व्यवस्था
 करने का काम प्राप्त हुआ वह और कच्छि से भी
 हीका वहाँ की की जो पुष्कर भी मोदीमन्त्री
 म के विचार करने से । मैं भी पुष्करभी मन्त्री का
 व्यवहार किस मुन्हा से कहूँ आज के बदोपदेश से
 मैं यह जान गया हूँ कि मेरे जैसे कच्छि का हजार
 होना महत्त्वपूर्ण है, अब आप भी की ही बात
 सहेंगे जो आप करमाँ वही मैं रबीकर करने को
 तैयार हूँ । आज ही अतिथि करानी मुझे मिली, नहीं
 ता सबका व्यवहार मैं ही था मैं प्रतिवर्ष अपनी
 स्टेट में आज के परिणामों से हीपानी, हाथी,

(३४१)

विजयादशमी, चतुर्विंशति एकादशी, द्वादशपूर्णिमा, श्री महावीरप्रभुजी का जन्म दिवस ऐसे ही राम, कृष्ण जी का जन्म दिवस और अपना और युवराज का जन्म दिन मेरी राजगद्दी का दिवस और भाद्रपद शुक्ला पचमी, इतने दिन प्रति वर्ष जीव हिंसा व शिकार सर्वथा छोड़ता हूँ । और अपनी रियासत भर में दया धर्म को पाजन कराता हूँ, आप श्री जी की यह वाणी का रस और त्याग कदापि नहीं भूलूंगा । नालागढ़ नरेश ने श्री महाराज से यह अर्ज की कि आप अग्ने लिये जो भी मार्गों मैं यथा-शक्ति देने को तैयार हू । तब श्री पूज्यवरजी म० ने फरमाया हमें दया, दान, प्रजा की रक्षा प्राणीमात्र का हित ही चाहिये, और किसी जर जमीनादि की अभिलाषा नहीं, अतः हम सन्यासी इन चीजों के

द्वार की बनवा मरवा कर विस्मृत हो रही, और
 वहाँ मरेरा ने अपने मन्त्री एवं सचिव का पुरीर
 सिहली से कहा मेरे इस जीवन का अन्त पश्चिम ही
 होता है, जो ऐसा स्थान और देश सङ्गमोन्नेरा मरवा
 करने का काम प्राप्त हुआ एक और व्यक्ति ने भी
 सीखा वहाँ की की जो पुष्कर भी मोतीपुष्प
 म के सिद्ध बने थे । मैं भी पुष्करभी महा का
 पम्बदाद जिस मुक्त से रहूँ, आज के ब्रह्मणेय से
 मैं बह जान गया हूँ कि मेरे जैसे व्यक्ति का उत्तर
 होना महाकठिन है, यह आज की की ही वरा
 सहेंगे जो आज करपावे वही मैं स्वीकार करने को
 तैयार हूँ । आज ही आदिपुष्पकी मुझे मिली मरी
 तो सर्वथा अल्पकार मैं ही वा मैं बलिबने अपनी
 स्नेह में आज के पनिमोन्नेरा य, दीपावली, दोहो,

ही प्राप्त होते हैं, शेष समाप्त हो गये (आपका मुख्य ध्येय गुर्वाज्ञा, शास्त्राभ्यास, चारित्र्य शुद्धि, धैर्यता, आत्म चिन्तन व मनन, आप अपनी क्रिया व चर्या में कभी पीछे नहीं रहते, यह सर्व उपकार श्री गुरुदेव जी महाराज का ही है ।

आपके लघुगुरु भ्राता (भाई) शान्त चित्त विनीत सेवा भावी त्यागमूर्ति सरलात्मा श्री मङ्गल-चन्द्रजी महाराज हैं, इनका जन्म शुभस्थान दहरा, महावटी (जि० करनाल) पंजाब प्रदेश में अप्रवाल जैन स्थानक वासी वंश में हुआ था, इन्हें बड़े वैराग्य से श्री गुरुदेवजी म० के समीप वि० सं० २००७, चातुर्मास दिक्षी सवर्जी मण्डी आश्विन मास में शोरा कोठी कैदार बिल्डिंग में हजारों नर नारियों के मध्य में श्री गुरुदेवजी म० व मरुस्थल प्रान्त के

(३४२)

स्थापी हैं आप अपने प्रण से कहा दूर न गइयें,
कृत्रिम बाल्य बढाव न अपना लें, प्रप वे अपने
जीवन में हो सपन पूर्यवाली मग के लडुपैठ से
काम उठाव और हर तरह मग को पूर्यवा फल
कर और करावा ।

आप भी जी पर अनेक सुनिधियों का पवित्र इर
कर है, आत्मभयन से शास्त्रध्यास से समसागर
से यहाँ पर बनक काम न किल सके यदि समब
मिला हो दूसर मग में कम महापुरुषों के कम नका-
त्मान रिब आवेंगे । विरघर मग से और अधिक
क्षिप्त भी न सक ।

आपने अपनी कोकनी से जो स्मरित सेवा की
और अनेक मग रचे भी और लिखे भी । अद्य पर्यन्त
११ हजार मग मिलत चुके हैं अब तो रोज मग

(३४३)

ही प्राप्त होते हैं, शेष समाप्त हो गये (आपका मुख्य
ध्येय गुर्वाज्ञा, शास्त्राभ्यास, चारित्र्य शुद्धि, धैर्यता,
आत्म चिन्तन व मनन, आप अपनी क्रिया व चर्या
में कभी पीछे नहीं रहते, यह सर्व उपकार भी गुरुदेव
जी महाराज का ही है ।

आपके लघुगुरु भ्राता (भाई) शान्त चित्त
विनीत सेवा भावी त्यागमूर्ति सरलात्मा श्री मङ्गल-
चन्द्रजी महाराज हैं, इनका जन्म शुभस्थान वहरा,
महावटी (जि० करनाल) पंजाब प्रदेश में अप्रवात
जैन स्थानक वासी वंश में हुआ था, इन्हें बड़े वैराग्य
से श्री गुरुदेवजी म० के समीप वि० सं० २००५, ०१
चातुर्मास दिल्ली सठजी मण्डी कविन नाथ में रहे, ०१
कोठी कैदार बिल्डिंग में स्थावर नाथि से
सभ्य में श्री गुरुदेवजी का वन्दन हमारे

(१४४)

पाचमहर्षी माग्यवर खड्गमन द्वितैषी जैमाध्याय्य पूज
 मी गणेशोद्यानजी म मी बाँदनी चौक से स्वर्णिम
 मण्डपकी से प्यारे से व अम्य भुमिवर मी बलिष्ठ
 से और दिल्ली शहर से काज मण्डपारिकी विदुषी
 महासखी भी पद्मावतीजी म० मी स्वर्णिम से इस
 अवसर पर वहाँ प्यारी भी और छोटी से
 विराजित महा माग्यवती राज्य स्वमावी दीर्घ स्वर्णिम
 महासखी भी मोहनदेवीजी म मी स्वर्णिम से
 वहाँ स्वर्णिम भी चतुर्विध संघ की स्वर्णिम से
 अपन दीक्षा प्राप्त की, वह दीक्षा कार्य का जेव सखी
 मंडी भी संघ व कल्याण जीवामकनो को है ।

मी शुद्धवंध म० मी स्वामी माग्यवती म
 शारीरिक उन्मादवस्था के कारण व भूतनों की दीक्षा
 से दिल्ली शहर में भी विराजमान हैं । और इस वने

स्वर्ण में सुगन्ध वाली कहावत चरितार्थ हुई कि जो गत वर्ष अर्थात् वि० स० २००६ में सादड़ी मारवाड़ में वृद्धमाधु सम्मेलन हुआ था ।

भिन्न २ प्रान्तों के स्थानकवासी साधु साध्वी सैकड़ों के लगभग और भावक आविकाएँ हजारों के लगभग एकत्रित हुए थे और सादड़ी के स्थानकवासी श्री सघ ने सघ ऐक्य योजना को लक्ष्य में रखकर अपूर्व कार्य भार उठाया सो ही पुण्य भूमि व शुद्ध-काल भाव ने बड़े सुन्दर रूप से सफल बनाया क्योंकि मारवाड़ सादड़ी श्री सघ के भावक आविकाओं का धार्मिकोत्साह का परिचय तो सभी को ज्ञात है, तथापि वि० स० १९६६ वें में यहाँ के श्री सघ का चातुर्मास स्वक्षेत्र में करनार्थ श्री गुरुदेवजी म० से अत्याग्रह भरी विनती की कि—आप श्री जी हमारे

(१४६)

क्षेत्र पर दरबार कर प्यो ही इस वर्षे जातुर्मास करने
 की कृपा छह करें । स्वर्गीय पंजाब केराही माह मास्य-
 वर श्रीमन्मन्त्रैय्यचामे श्री काशीपामजी म० की भजना
 व श्री छंद की पुरखोर बिमती से श्री गुडरेबजी म०
 ने ३ सुठों से जातुर्मास करना लीकार करमाणा कर
 यादि गिन्य । श्री प्रवर्तक श्री स्वामी मागमनजी म०
 के जातुर्मास में सबे इज्जत धर्मधर्म व सेवामात्र
 उपरचर्चर्च सबी बहुत भावों से करती रही परन्तु
 यहाँ कोई नार्मिक शिष्य सुत्था ॥ जाने से भाषी
 कमता धर्मोत्पाद से धर्ममिष्ट थी वह कमी श्री
 प्रवर्तकजी म० साहिब को बहुत अलखती । अब
 श्री प्रवर्तकजी म० की शुभ कामना व र० २० धर्म
 शिष्यधामी श्री स्वामी मित्रोदकचन्द्रजी म० छा० के
 नार्मिक धर्मोपदेश से प्यो पर जोड़े पैमाने पर पाठ

शाला प्रारम्भ हुई, जिसमें बालक बालिकाओं को धार्मिक शिक्षण सवर, सामायिक, प्रतिक्रमणादि व थोकदा ज्ञान प्राप्त होने लगा, श्री संघ का ऐसा उत्साह वृद्धि पर हुआ कि लोकेशाह गुरुकुल, को विशाल रूप दिया । जिस बिल्डिंग में वृद्धसाधु सम्मेलन भी हुआ यह सर्व उपकार श्री पं० स्वामी भागमलजी म० सा० के चातुर्मास का है, सर्व श्रावकों ने एक ध्वनि से यह कहा, ऐसा अपूर्व धर्मवृद्धि ज्ञानवृद्धि का चातुर्मास हमने अपने जीवन में नहीं देखा, कि आपने किसी का एक पैसा खर्च किसी ^{विज्ञे} कार्य में नहीं कराया, और समाज की व धर्म की नींव कैसी सुदृढ़ बनाई, ऐसा सौभाग्य आप ही का है जो हमारी कमी को दूर किया । धन्य है ऐसे गुरुदेवों को, अब वहीं पर आते हैं कि चतुर्विध संघशुद्ध भाव लेकर

(३४८)

इस सम्मेलन में पधारे वे दो इस मुषणों अपसर पर
 सबे माण्यवर जैनार्थ पुवाचार्य ब्याण्डव व्याधि
 सब हो ने संग्रहार्थ देशकाल को कथन में रत्न कर
 सबने अपनी १ पदविर्चों का विहीमीकरत कर श्री
 त्यानकव ही जैन वर्तमान समय संघ सर्वेयह से
 त्यापन किया और भिन्न २ सम्प्रदायों समाप्त की, और
 अपना प्रमाणार्थ साहित्य रत्न राजा विहारद जैन
 धर्म दिखाकर श्री चारमायनजी महाराज को बल्लभ
 और ब्याचार्य शास्त्र इत्ये सर्वजन प्रेमी श्री गणेशी
 काहमी महाराज को मिषुक्त किया । और संघ रक्षा
 के लिए इन दोनों महापुरुषों के बीच ओझह मुनि-
 पणों का एक मन्त्रिमण्डल बनाया । सब मन्त्रियों के
 आधिपत्य में भिन्न २ भागों का कार्य समर्पण किया ।
 इस ओझह मन्त्री-मंडल में दो पंजाब राज्य के सुरक्षक

व प्रबंधक मन्त्री पद से विभूषित पंडितरत्न बालग्रह-
चारी शांतस्वभावी ज्ञानधारिणि पं० श्री शुक्लचन्दजी
महाराज को नियुक्त किया, मरुस्थल प्रान्त को पावन
करते हुए शिव्य मंडलीसे जोधपुर शहर का चातुर्मास
समाप्त कर उम्र विहार करते हुए आप दिल्ली सदर में
पधारे । और वयोवृद्ध स्थविर पद विभूषित प्रवर्तक
श्री स्वामी श्री भागमलजी महाराज साहिब के दर्शनों
का सौभाग्य प्राप्त हुआ । और अन्य मुनिराजों
को आप श्री जी के दर्शनों का लाभ प्राप्त
हुआ और श्री वर्द्धमान स्थानक वासी जैन सघ
दिल्ली को आपके शुभ दर्शन व धर्मोपदेश
श्रवण करने की दीर्घकाल से अत्यन्त पिपासा लगी हुई
थी, चिरकाल की आशा को आप श्री जी ने पधार
कर सफल करी । पर जनता यह दीर्घकाल की पिपासा

मोझे काक मे कहीं मिठा सक्ती थी। अरु रिहो
 सहर की संघ न सक्ती मरही नी संघ मे रिहजिउ
 यबोवूय सहर एद विमक्ति सरल न बहिप्रत्य मे
 कही मायेना की कि हमारा संघन नी संघ का नर
 बिचार है नी ए० ए० काक मरुवापी वंशन मरुत के
 सुरक्षक मन्त्री एद विमक्ति नी स्वामी शुक्रचन्द्रनी
 म० का बाहुर्मात कहीं ही हो। नी म० यबोवूय
 स्वा० ए० नी स्वामी भागचन्द्रनी म० के कयाना
 कि वह सुनकर मुने मठीन हर्ष हुआ और मेठ नी
 कही बिचार है कि नी पंडित नी का बाहुर्मात मेरे
 पाल ही रिहो मरु मे ही हा, यद्यपि म० ए० के
 अनेक क्षेत्रों की न वंशन के कई क्षेत्रों की बाहु
 मांकार्य नी ए० ए० नी म० की पुर खोर बिलयी हो
 यी नी नर नी ए० ए० नी शुक्रचन्द्रनी म० ने

दिल्ली सदर व सब्जी मंडी क्षेत्र की विनती को बड़े हर्ष से स्वीकृति प्रदान करी, आपका हृदय भी विशाल व उदार है और आपने फरमाया कि श्री प्रवर्तकजी म० यहाँ विराजमान हैं, इन महापुरुषों का कहना मेरे लिये मान्य है, ऐसा शुभावसर तो बड़े भाग्य से मिलता है, लोग तीर्थकरनार्थ दूर २ नदी पर्वतों में जाते हैं पर ऐसी सरलात्मा त्यागात्मा वयोवृद्ध म० की सेवा व दर्शन का लाभ कहाँ रक्खा है ।

और आप श्री जी ने दिल्ली शहर के सभी क्षेत्रों को चातुर्मास में धर्मोपदेश का लाभ देने के लिए आगार (खुला रक्खा) यह फरमान सुनने दिल्ली सदरादि सभी क्षेत्रों की जनता ने हर्ष प्रमोद से जय-ध्वनि के नाद से नभ मण्डल गुञ्जा दिया, अतः कार्य भी तो अतिहर्ष का था ।

(३५९)

बन्ध है जग भी की के जगार हृष्य और
गम्भीरता को ।

॥ ॐ शान्ति । शान्ति ॥ शान्ति ॥

लेखक भवदीप—

राजकुमार जैन



धन्यवाद

- इस ग्रन्थ के प्रकाशन में जिन महानुभावों ने तन, मन, धन से स्वशक्ति से पूरा सहयोग दिया है, वे सदैव धन्यवाद के पात्र हैं। उनके शुभ नाम-
- १, श्रीमान् ला० मामचन्दजी के सुपुत्र ला० पन्नालालजी कानी वाले (हाल डिण्टीगज, दिल्ली)
 - २ गुप्तदानी
 - ३ श्रीमान् ला० दईरामजी रामकृष्णजी गढ़ी जम्नियारा (हाल हस्तिनागपुर)
 - ४ श्रीमान् डा० प्रेमचन्द्रजी की धर्मपत्नि श्रीमती शान्तिदेवी बरनाले वाले (हाल धारहट्टी, दिल्ली)
 - ५ श्रीमान् धर्मप्रेमी गुरुभक्त ला० प्यारालालजी राजाखेड़ी वाले की धर्मपत्नी श्रीमती धम्मदूरी देवी (हाल खारी बावली, दिल्ली)

- ६ श्रीमान् शा० बलबन्तदासजी की बरौपत्नी श्रीमती
लक्ष्मीदेवी रावबलपिपली बाबे (दास नई दिल्ली)
- ७ स्वर्गीय शा मुन्दरदासजी अणेका स्वाकछेटी
(दास दिल्ली)
- ८ श्रीमती कच्छीदेवी नाकागढ़ बाबे (दास न्यू दिल्ली)
- ९ श्रीमान् डा बिद्यवतीदासजी की बरौपत्नी का
छोर से । नाकागढ़ बाबे (दास न्यू दिल्ली)
- १० गीरकुण्डा मन्त्री के माइजी से श्री पूण मद्र
बाग दिया ।
- ११ डा कानीराम मूकचन्दजी पण्डितान बाबे
(दास मोठीबाबाग दिल्ली)
- १२ डा ब्रम्हपण्डित सुर्योदकाय कच्छबा बाबे
(दास मोठीबाबा कच्छ दिल्ली)
- १३ डा कच्छीदासजी एमेरवरदण्डजी
(कच्छबा बाबे) दास मोठीबाबाग दिल्ली ।

(३)

- १४ ला० प्यारेलालजी वैणीप्रसादजी जैन
(हलालपुर वाले) हाल यू० पी० पलिये कला
(लखीमपुर खैरी) ।
- १५ ला० गोपीराम इन्द्रचन्द्रजी खूबड़ु वाले
(हाल दिल्ली डिप्टोगज) ।
- १६ श्रीमती आशादेवी धर्मपत्नी शिखरचन्दजी जैन
(दिल्ली सब्जीमण्डी, कमलानगर)
- १७ ला० सूरजभानजी राजकुमारजी जैन
(राजपुर वाले, हाल दिल्ली, पहाड़ीधीरज)
- १८ ला० रामलालजी शोरीलालजी ओसवाल
अमृतसर वाले (हाल दिल्ली सदर)
१९. ला० मोतीलाल आफ ला० नत्थू शाह लालू शाह
दिल्ली सदर ।

आपका—शुभेच्छुक
सुखचैनलालजी जैन

प्रवचक—

धर्म प्रेमी गुरुमच्छ गुरु विचारक
भीमान् हा० सुखचैनलालजी जैन
फरीशकोट बाबो (इन्द्र विही सर)

पुस्तक लिखने के पदा—

- १ जैनधर्म प्रचारक सामग्री भण्डार
जैन स्थानक सदर बाजार, डिण्डीगंज, दिल्ली ।
- २ ला० प्यारेलालजी धोसुप्रसादजी जैन
नयाबास, दिल्ली
- ३ ला० रामचंदजी पन्नालालजी जैन
सदर बाजार, डिण्डीगंज, दिल्ली

सौम्यता इतिहास प्रेम श्रीम माहेंद्र देवजी ।

